Title of the Thesis *"MANNU BHANDARI AUR ABBURI CHAYA DEVI KI KAHANIYON MEIN SAMAJIK YATHARTH"* A thesis submitted during 2011 to the University of Hyderabad in partial fulfillment of the award of a M.Phil. degree in Department of Hindi School of Humanities.


By

**SIVAKUMARI GORANTLA**

Department of Hindi
School of Humanities

University of Hyderabad
(P.o) Central University, Gachibowli
Hyderabad-500 046
Andhra Pradesh
INDIA.

# "MANNU BHANDARI AUR ABBURI CHAYA DEVI KI KAHANIYON MEIN SAMAJIK YATHARTH"

**Master of Philosophy in Hindi**

By

**SIVAKUMARI GORANTLA**

2011

Head of the Department
***Prof.RAVI RANJAN,*** Ph.D
Head of the Deprtment
Dept. of Hindi
Central University of Hyderabad
Hyderabad - 500 046

Supervisor
***Prof.SHASHI MUDIRAJ,*** D.Lit.
Head of the Deprtment
Dept. of Hindi
Central University of Hyderabad
Hyderabad - 500 046

Department of Hindi
School of Humanities
Central University of Hyderabad
Hyderabad-500 046

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ

**(हैदराबाद विश्वविद्यालय की एम.फिल.(हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध)**

2011


प्रस्तुतकर्ता

***शिवकुमारी गोरंट्ला***

विभागाध्यक्ष

***प्रो. रवि रंजन,*** पी-एच.डी.

अध्यक्ष, हिंदी विभाग,

हैदराबाद विश्वविद्यालय,

हैदराबाद - 500 046

निर्देशक

***प्रो.शशि मुदीराज,*** डी.लिट.

प्रोफेसर, हिंदी विभाग,

हैदराबाद विश्वविद्यालय,

हैदराबाद - 500 046

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हैदराबाद-500 046

# DECLARATION

I hereby declares that the work embodied in this dissertation entitled **"MANNU BHANDARI AUR ABBURI CHAYA DEVI KI KAHANIYON MEIN SAMAJIK YATHARTH"** has been carried out by me under the supervision of **Prof.SHASHI MUDIRAJ**, Professor, Department of Hindi, School of Humanities, University of Hyderabad, Hyderabad is original and that the dissertation or any part of it has not been submitted for a degree in any other University or Institute.

Hyderabad
Date : . .2011

**SIVAKUMARI GORANTLA**
09HHHL03
University of Hyderabad

**DEPARTMENT OF HINDI**
**School of Humanities,**
**University of Hyderabad,**
**Hyderabad – 500 046.**

Date: .0 .2011

This is to certify that I, **SIVAKUMARI GORANTLA** have carried out the research embodied in the present dissertation entitled **"MANNU BHANDARI AUR ABBURI CHAYA DEVI KI KAHANIYON MEIN SAMAJIK YATHARTH"** for the full period prescribed under M.Phil. ordinances of the University of Hyderabad.

I declare to the best of my knowledge that no part of this dissertation was earlier submitted for the award of research degree of any University.

Signature of the Supervisor

(Signature of the Candidate)
Name : SIVAKUMARI GORANTLA
Enrolment No.:09HHHL03

Head, Department of Hindi

Dean, School of Humanities

# ***अनुक्रमणिका***

## ***मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ***


**प्र.सं.**

**भूमिका** **I-II**

**अध्याय-I** **01-25**

**मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी का जीवन परिचय**

1.1 मन्नू भंडारी का जीवन परिचय

1.1.1 जन्म स्थान

1.1.2 माता-पिता

1.1.3 भाई-बहन

1.1.4 शिक्षा

1.1.5 अध्यापिका के रूप में

1.1.6 विद्रोही भावना

1.1.7 राजेंद्र यादव से मुलाकात

1.1.8 विवाह

1.1.9 प्राध्यापकीय जीवन

1.1.10 पुरस्कारों का माहौल

1.1.11 व्यक्तित्व और रचना प्रक्रिया

1.1.12 विद्वानों की राय में मन्नू

1.1.13 मन्नू का साहित्य : दुनिया की नज़र में

1.1.14 मन्नू की कहानियों का मंचन

1.1.15 योजनाएँ भविष्य की

1.2 अब्बूरी छायादेवी का जीवन परिचय

1.2.1 जन्म स्थान

1.2.2 माता-पिता

1.2.3 भाई-बहन

1.2.4 शिक्षा

1.2.5 विवाह

1.2.6 पति

1.2.7 पेशा

1.2.8 रचना प्रक्रिया

1.2.9 अन्य विशेष

1.2.10 पुरस्कार

1.2.11 व्यक्तित्व

**अध्याय-II** **26-48**

**मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों का अंतर्बोध**

2.1 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक अंतर्बोध

2.2 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में पारिवारिक अंतर्बोध

2.3 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक अंतर्बोध

2.4 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में राजनैतिक अंतर्बोध

**अध्याय-III** **49-88**

**मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ**

3.1 सामाजिक यथार्थ

3.2 व्यक्तित्व का महत्व

3.2.1 बंधन

3.2.2 आदर्श

3.2.3 पुनर्विचार

3.3 भेद-भाव

3.3.1 लिंग-भेद

3.3.2 लालित्य

3.4 मानसिक संघर्ष

3.4.1 द्वंद्व

3.4.2 अकेलापन

3.4.3 सज़ा

3.4.4 बुढ़ापा

3.4.5 बचपन

3.5 मध्यवर्गीय जीवन

3.5.1 पिछड़ापन

3.5.2 अध्यापक

3.5.3 व्यापार

3.5.4 न्याय

3.5.5 राजनीति

3.6 आर्थिक समस्या

3.6.1 हैटेक शोषण

3.6.2 जागृति

3.6.3 असंतुलन

3.6.4 अभाव

3.7 नारी जीवन

3.7.1 मजबूरी

3.7.2 अनुसरण

3.7.3 □ीत हार

3.7.4 समझौता

3.7.5 सफलता

3.7.6 भ्रमण

3.7.7 सेन्स आफ बोरडम

3.7.8 निद्राहीनता

3.8 पारिवारिक समस्या

3.8.1 आज़ादी

3.8.2 त्रासदी

3.8.3 निःसहाय

3.8.4 पिता

3.8.5 पति-पूजा

3.8.6 स्नेहहीन व्यवहार

3.8.7 माँ का वात्सल्य

3.8.8 वृद्धावस्था की लापरवाही

3.9 सामाजिक विषमता

3.9.1 अंधविश्वास

3.9.2 आधुनिक समाज

3.9.3 मानसिक कुंठा

3.9.4 अस्तित्व

3.9.5 स्त्री शिक्षा

3.9.6 बुराई

3.9.7 स्त्री की पहचान

**अध्याय-IV** **89-98**

**उपसंहार**

**संदर्भ ग्रंथ सूची** **99-101**

# भूमिका

मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियाँ समाज की चुनौतीपूर्ण समस्याओं का दस्तावेज़ हैं। मन्नू भंडारी की कहानियों में स्त्री के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रहकर, पुरुष के प्रति तीखी आलोचना का स्वर है। मन्नू भंडारी एवं छायादेवी की कहानियाँ आपस में मिलती-जुलती हैं। लेकिन छायादेवी स्त्री एवं पुरुष के प्रति केवल सकारात्मक दृष्टि ही रखकर उनकी समानता एवं सद्भावना के लिए अपनी आवाज़ सृजनकार्य के अंतर्गत उठाई है। दोनों की कहानियों में गाँव, शहर एवं आधुनिक अंश भी भरपूर मिलता है। लेकिन ज्यादातर मन्नू भंडारी की कहानियाँ मनोवैज्ञानिक रहकर आगे बढ़ती हैं जबकि छायादेवी की कहानियाँ सीधे-सीधे पाठक को परखने लगती हैं। दोनों के संपूर्ण कथा साहित्य का गहरा प्रभाव पाठक पर ऐसे ही पड़ जाता है। अब्बूरी छायादेवी के साक्षात्कार से इस बात का भी एहसास होता है कि वे अपनी कथाओं की कथावस्तु एवं पात्र उनके ही आस-पास के घटित घटनाओं से है। किंतु पात्रों का नामकरण बहुत कम किया गया है। छायादेवी की तरह मन्नू भंडारी की कहानियों की कथावस्तु एवं पात्र उनके अपने जीवन से तथा निकट घटनाओं के परिवेश से हैं। लगता है कि दोनों लेखिकाओं ने सृजन कार्य के प्रति अपना उत्तरदायित्व भरपूर निभाया। मन्नू भंडारी एवं अब्बूरी छायादेवी के लक्ष्य स्त्री मुक्ति, समाज सुधार तथा समन्वय इत्यादि लोक मंगलकारी भावनाएँ हैं।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध को चार अध्यायों में विभाजित किया गया है। पहले अध्याय के अंतर्गत मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी के जीवन परिचय को लिया गया है। इस अध्याय में दोनों लेखिकाओं के जीवन परिवेश एवं साहित्य सृजन को विस्तार पूर्वक व्यक्त किया गया है।

द्वितीय अध्याय के दौरान मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों का अंतर्बोध लिया गया है। इसके अंतर्गत कहानियों का मूल स्वर एवं लिखने के कारणों को प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। दोनों लेखिकाओं की कहानियों का स्वर कहीं-कहीं मेल खाता है तो कहीं-कहीं सूक्ष्म रूप से भिन्नता दिखाई पड़ती है।

तृतीय अध्याय ‘मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ’ है। जिसमें छायादेवी एवं मन्नू भंडारी की प्रमुख अथवा श्रेष्ठ कहानियों का सामाजिक यथार्थ सीधे-सीधे व्यक्त किया गया है, जो आज के समाज का कटु सत्य है। कहना न होगा कि समाज के कई वर्ग इसमें शामिल हैं, जो आज के समाज को चुनौती देते हुए अपने आवेग की आवाज़ को बुलंद करने को व्याकुल हैं।

अंतिम अध्याय उपसंहार है। मैं मुख्य रूप से अपने निर्देशक प्रो.शशि मुदीराज जी के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने हमेशा मुझे मार्ग दर्शन देने के साथ-साथ शोध कार्य की कई समस्याओं से बाहर निकाला, और साथ-ही-साथ पूर्ण रूप से हमेशा उनसे मदद मिली। मैं फिर से प्रो.शशि मुदीराज जी को धन्यवाद अर्पित करती हूँ। हिंदी विभाग के अन्य अध्यापकगण को धन्यवाद अर्पित करती हूँ। आशा करती हूँ कि मेरा यह जो तुलनात्मक अध्ययन है वह द्विभाषी साहित्यिक पाठकों तथा अन्य साहित्यिक पाठकों को लाभदायक सिद्ध होगा, साथ ही सुप्रसिद्ध तेलुगु साहित्य की लेखिका से सृजित साहित्य का परिचय मिलेगा और अंततः दोनों स्त्रीवादी लेखिकाओं के साहित्य के साम्य तथा वैषम्य की भी जानकारी मिलेगी।

मेरे जीवन के आधार माता-पिता एवं बहन की साधना एवं कम प्रेरणा के रूप में उपस्थित रही। जिन्होंने अपनी विपरीत परिस्थितियों में भी मुझे उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु भेजा। मेरे प्रिय जीजु पापा राव (पापय्या) का सहयोग और अनमोल सुझाव निरंतर मुझे कार्य करने की आंतरिक शक्ति देता रहा। उनके प्रति मैं किन शब्दों में आभार प्रकट करूँ? उनके प्रति तो ऋणी हूँ।

अंततः मैं श्रीमती राधा जी को आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने इस लघु शोध प्रबंध के टंकन को सफलतापूर्वक पूरा किया।

स्थानः **जी.शिव कुमारी**

दिनांक ：

# अध्याय-I

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी का जीवन परिचय

1.1 मन्नू भंडारी का जीवन परिचय

- 1.1.1 जन्म स्थान
- 1.1.2 माता-पिता
- 1.1.3 भाई-बहन
- 1.1.4 शिक्षा
- 1.1.5 अध्यापिका के रूप में
- 1.1.6 विद्रोही भावना
- 1.1.7 राजेंद्र यादव से मुलाकात
- 1.1.8 विवाह
- 1.1.9 प्राध्यापकीय जीवन
- 1.1.10 पुरस्कारों का माहौल
- 1.1.11 व्यक्तित्व और रचना प्रक्रिया
- 1.1.12 विद्वानों की राय में मन्नू
- 1.1.13 मन्नू का साहित्यः दुनिया की नज़र में

1.1.14 मन्नू की कहानियों का मंचन

1.1.15 योजनाएँ भविष्य की

1.2 अब्बूरी छायादेवी का जीवन परिचय

1.2.1 जन्म स्थान

1.2.2 माता-पिता

1.2.3 भाई-बहन

1.2.4 शिक्षा

1.2.5 विवाह

1.2.6 पति

1.2.7 पेशा

1.2.8 रचना प्रक्रिया

1.2.9 अन्य विशेष

1.2.10 पुरस्कार

1.2.11 व्यक्तित्व

# अध्याय-I

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी का जीवन परिचय

## 1.1 मन्नू भंडारी का जीवन परिचय

मन्नू जी के जीवन परिवेश में कदम रखने के पहले जीवन से संबंधित कुछ अंशों पर प्रकाश डालना चाहती हूँ। प्राचीन काल के आरंभ से लेकर आधुनिक काल की शुरुआत तक साहित्य के संसार में भी पुरुषाधिक्य समाज पीछा नहीं छोड़ा। आधुनिक काल में ऐसा नहीं है, जबकि प्राचीन काल के समाज में स्त्रियाँ शिक्षा को लेकर करारी चोट खायी हैं। उनको शिक्षा-दीक्षा से वंछित किया गया। आज के कई सामाजिक परिवारों में भी लड़कियों को याने औरतों को पढ़ाने की परंपरा नहीं है। इस तरह के ही सामाजिक परिवार में मन्नू जी भी हैं। मारवाड़ी समाज के होते हुए भी सुखसंपतराय (मन्नू जी के पिता जी) ने अपनी बेटियों (मन्नू, स्नेहलता, सुशीला) को पढ़ाया। अगर उस समय मन्नू पढ़ी-लिखी नहीं होती तो आज के हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध कहानीकारों की कोटि में अपना स्थान नहीं बना पाती। आज वह अपनी रचनाओं में नारी की तमाम समस्याओं को साक्षात्कार कर रही है। आशा है कि उनकी साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से समाज में कहीं-न-कहीं परिवर्तन आ जाए।

### 1.1.1 जन्म स्थान

मन्नू भंडारी का जन्म 3 अप्रैल, सन् 1931 को भानपुरा नामक छोटे से गाँव में हुआ। यह गाँव मध्यप्रदेश में है।

### 1.1.2 माता-पिता

मन्नू जी की माता जी का नाम अनूप कुंवरि था। वे अनपढ़ थीं, लेकिन अनपढ़ होते हुए भी अपने पति की किताबों को बांधन, पार्सल करना तथा क्रमानुसार रखना इत्यादि छोटे-मोटे कार्य यूँ ही कर देती थीं। उनकी माँ का व्यक्तित्व ऐसा था कि वे हर किसी को स्नेह देती नज़र आतीं, मगर किसी से स्नेह नहीं लिया है। अनूप जी ने मन्नू जी के अंतर्जातीय विवाह का विरोध नहीं किया, वे जीवन में आयी हुई हर स्थिति को समझकर स्वीकार करती चली।

मन्नू जी अपनी माँ के संबंध में कहती हैं कि-"माँ ने हमें कभी रसोई में आने नहीं दिया और न ही घर के कार्य में हमारी मदद ली। उस समय हम जुलूस निकालना, भाषण देना, घर देर-सवेरे आना आदि का भी उन्होंने कभी विरोध नहीं किया और न उन पर कोई टीका-टिप्पणी ही की। उसी का परिणाम है कि आज हम कुछ बन पाये हैं।"[1]

मन्नू जी के पिताजी का नाम सुखसंपतराय था। वे उस समय के प्रतिष्ठित विद्वान थे। उनका परिवार मूलतः संयुक्त मारवाडी परिवार था। उनके समय में स्वतंत्रता आंदोलन बहुत जोर पर था। इंदौर में कांग्रेस की स्थापना इन्हीं के घर पर हुई थी। वे जैन धर्म के होते हुए भी आर्य समाज से प्रभावित थे।

सुखसंपतराय जी हिंदी साहित्य जगत के जाने-माने व्यक्ति थे। उन्होंने हिंदी पारिभाषिक शब्दकोश की रचना आठ भागों में किया और उनकी कुछ अन्य रचनाएँ भी हैं। विश्व कोश का काम चल रहा था, वे बीमार होते हुए भी अंतिम समय तक विश्वकोश का ही काम करते रहे। उनका देश प्रेम अंतिम समय तक बना रहा और साथ ही देश की स्वतंत्रता के बाद की स्थिति, सत्ता की राजनीति तथा भ्रष्टाचार से वे बहुत दुःखी हुए। मन्नू जी के व्यक्तित्व पर अपने पिता का व्यक्तित्व अधिक मात्रा में प्रभावित रहा है। मन्नू के पिता जी ने मारवाडी जैन समाज में प्रचलित

---

[1] मन्नू भंडारी से साक्षात्कार, ले.अनीता राजूरकर

धारणा का विरोध कर अपनी बेटियों को शिक्षा दिलाया और राजनीति में हिस्सा लेना इत्यादि विषयों में हमेशा प्रोत्साहन दिया।

### 1.1.3 भाई-बहन

मन्नू जी के भाई बहनों की संख्या 4 है। उनके दो भाई और दो बहने हैं। उनके पहले भाई का नाम है प्रसन्न कुमार, जिन्होंने अंग्रेज़ी में एम.ए. किया है और संप्रति नौकरी करते हैं। दूसरे भाइ्र का नाम है वसंत कुमार। इन्होंने भी अंग्रेज़ी में एम.ए. किया है और वे भी संप्रति नौकरी करते हैं।

पहली बहन स्नेहलता नवरत्नमल बोर्डिया की शिक्षा बी.ए. तक हुई। वे इंदौर में रहती हैं। दूसरी बहन का नाम सुशीला पराक्रमसिंह भंडारी है। इनकी शिक्षा भी बी.ए. तक हुई है। वे कलकत्ता में रहती हैं। उन्होंने मांटेसरी में ट्रेनिंग ली है और पिछले 25 वर्षों से स्कूल चला रही हैं। कलकत्ता में मन्नू इन्हीं के पास रहती थीं।

### 1.1.4 शिक्षा

मन्नू भंडारी जी ने अजमेर के 'सावित्री गर्ल्स हाई स्कूल' में शिक्षा पूर्ण की। उनका मैट्रिक 1945 में हुआ। सन् 1945-47 तक अजमेर के हिी कॉलेज में इंटर किया। अपनी बहन के बुलाने पर मन्नू कलकत्ता चली गयी। उन्होंने कलकत्ता किसी कॉलेज से बी.ए. किया। बी.ए. तक उनका विषय हिंदी से संबंधित नहीं था। लेकिन उन्होंने बी.ए. के उपरांत हिंदी विषय लेकर काशी हिंदू विश्वविद्यालय से बहिस्थ के रूप में एम.ए. किया।

### 1.1.5 अध्यापिका के रूप में

कलकत्ता के 'बाली गंज शिक्षा सदन' स्कूल में 9 साल तक अध्यापन कार्य किया। स्कूल के बच्चों को पढ़ाने में मन्नू जी को बड़ा आनंद आता है। वे छात्रवात्सल्य थीं, किताबें पढ़ने और पढ़े हुए विषय को पढ़ाने का उनको बहुत शौक था। इसीलिए पुस्तकालय को संभालने का कार्य उन्हें दिया गया।

### 1.1.6 विद्रोही भावना

मन्नू जी की विद्रोही भावना हमें बचपन से ही प्राप्त होती है। कालेज की प्राध्यापिका शीला अग्रवाल और वसुमती मीनन ने लड़कियों को देश प्रेम और अंग्रेज़-सरकार के विरोध में उकसाती रहती थी। मन्नू जी पर इन प्राध्यापिकाओं का और घर के संस्कारों का प्रभाव भरपूर पड़ा। स्वतंत्रता संग्राम में कार्य करते हुए घर देर पहुँचने पर मन्नू हमेशा डांट खाती रहती है, फिर भी सुबह होते ही वह निकल पड़ती।

### 1.1.7 राजेंद्र यादव से मुलाकात

कलकत्ता के 'बालीगंज शिक्षा सदन' स्कूल के अध्यक्ष श्री भगवती प्रसाद खेतान थे। वे साहित्य प्रेमी थे। राजेंद्र यादव जी शोधकार्य करने कलकत्ता पहुँचे। साहित्य में रुचि रखने के कारण श्री भगवती प्रसाद खेतान जी से उनका परिचय हो गया। उन्होंने स्कूल का पुस्तकालय अध्ययन करने के लिए राजेंद्र जी को आमंत्रित किया और वहाँ पर पुस्तकों की चर्चा करते हुए उनका मन्नू भंडारी से परिचय हुआ।

### 1.1.8 विवाह

मन्नू जी का विवाह राजेंद्र यादव जी से परिचय के लगभग दो साल के बाद 1959 में हुआ था। यह अंतर्जातीय विवाह था। उन्होंने परंपरागत मान्यताओं को याने रूढ़िवादी व्यवस्था का विरोध कर अपनी इच्छानुसार वर चुन लिया। मन्नू जी की बहन सुशीला, उनके पति पराक्रमसिंह भंडारी तथा भगवती प्रसाद जी ने स्वागत-समारोह का आयोजन किया था। सामान्यतः मन्नू को शादी के बाद मन्नू यादव लिखना शुरू कर देना चाहिए था लेकिन वह ऐसा नहीं किया। यह एक तरह से पुरुषाधिक्य समाज के लिए चुनौती है।

### 1.1.9 प्राध्यापकीय जीवन

मन्नू सन् 1961 में अध्यापिका से प्राध्यापिका बनीं। सन् 1964 तक कलकत्ता में 'रानी बिड़ला कॉलेज' में उन्होंने अध्यापन कार्य किया। इन्हीं दिनों श्री

राजेंद्र यादव ने दिल्ली जाकर वहाँ स्थायी होने का निर्णय लिया। तदोपरांत वे 1964 से दिल्ली में ही रहने लगे। तब से अब तक मन्नू जी दिल्ली के प्रसिद्ध सोफिस्टिकेटेड कॉलेज 'मिरांडा हाउस' (दिल्ली विश्वविद्यालय से संबद्ध) में प्राध्यापिका के रूप में कार्यरत हैं। सप्ताह में एक दिन 'दिल्ली विश्वविद्यालय' में भी पढ़ाने जाती हैं। उनके जीवन में अध्ययन और अध्यापन अबाध गति से चल रहा है।

### 1.1.10 पुरस्कारों का माहौल

मन्नू भंडाीर की रचनाओं को कई पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। उनको श्रेष्ठ साहित्यकार के रूप में भी सम्मानित किया गया। पुरस्कारों की सूची निम्नांकित रूप से देख सकते हैं-

1. भारतीय भाषा परिषद की ओर से 'रामकुमार भुवालका' पुरस्कार।
2. उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान से सम्मानित
3. केंद्रीय हिंदी निदेशालय की ओर से 'अहिंदी भाषी क्षेत्र' की हिंदी लेखिका पुरस्कार
4. शिमला के 'आल इंडिया आर्टिस्ट एसोसिएशन' द्वारा भारतेंदु हरिश्चंद्र एवार्ड और पीपुल्स एवार्ड।

पुरस्कारों की अस्वीकृति

मन्नू भंडाीर को सन् 1976 में 'पद्मश्री' पुरस्कार दिये जोन का निर्णय हुआ था, साथ ही साहित्य कला परिषद (दिल्ली) ने भी उन्हें पुरस्कृत करना चाहा था। बल्कि उन्होंने पुरस्कारों को यूँ ही अस्वीकार कर दिया था। क्यांकि उस समय आपात् की स्थिति जारी थी।

### 1.1.11 व्यक्तित्व और रचना प्रक्रिया

गिरिराज किशोर जी ने 'मन्नू भंडारीःजिंदगी की समझदारी' लेख में लिखा है-"मन्नू जी की पहचान उस बिंदी से शुरू हुई थी और आज रचनाओं तक पहुँच गयी है। ... मन्नू जी को पहली बार देखकर यह प्रश्न जरूर मन में आया कि क्या ये ही वो हैं जो कहानियाँ लिखती हैं? महिला कहानी लेखिकाओं को देखने और उन्हें

एक विशिष्ट रूप में स्वीकार करने की आदत के फलस्वरूप मन्नू जी कहानी लेखिका उतनी नज़र नहीं आती जितनी घरेलू स्त्री।"[2]

मन्नू जी अपनी संपादित पुस्तक ‘अपने से परे’ की भूमिका में मन्नू जी ने कहानी लेखकों को सुझाव देते हुए लिखा है-"एक अच्छा कहानी लेखक बनने से पहले अनिवार्य है एक अच्छा कहानी पाठक बनना।" मन्नू जी को आज भी कहानी-उपन्यास पढ़ने में रुचि है। उनके पर्सनल लाइब्रेरी में प्रेमचंद, यशपाल से लेकर अभिमन्यु अनंत तक की सारी पुस्तकें उपलब्ध हैं। वहाँ जयशंकर प्रसाद, चंद्रकांत बांदिवडेकर, राम-नगरकर, ममता कालिया, यादवेंद्र शर्मा ‘□ंद्र’, मृदुला गर्ग, अब्दुल बिस्मिल, अमरकांत, अल्बेयर कामू आदि सभी नये-पुरोन चर्चित-अचर्चित साहित्यकारों की पुस्तकें देखी जा सकती हैं।

राजेंद्र यादव से बातचीत के दौरान अनीता राजूरकर पूछती हैं कि-मन्नू जी लेखिका नहीं बनती तो क्या करती? जवाब में राजेंद्र यादव ने कहा-"मन्नू घरेलू महिला के रूप में रह ही नहीं सकती थी। राजनीतिज्ञ बनती या पति को तंग करती रहती, क्योंकि घर में रहती तो घर की सफाई करवाती रहती।" आगे चलकर अनीता राजूरकर ने फिर से एक सवाल यादव जी से पूछा-मन्नू ही के साहित्य की लोकप्रियता का क्या कारण है? राजेंद्र जी ने कहा कि-"किसी भी कलाकार की लोकप्रियता के मूल में दो ही कारण दिखाई देते हैं-एक या तो वह छिछोरेपन को अभिव्यक्ति दे या फिर वह जनमानस की संवेदना से जुड़े। यही दूसरी बात मन्नू की कहानियों में भावात्मक प्रस्तुतीकरण है जिसके कारण मन्नू भंडारी समकालीन कहानी लेखकों को कई गुना पीछा छोड़ गयी है।

मन्नू भंडारी जी की कहानियों से प्रभावित कई पाठक गण हमेशा उनको पत्र भिजवाया करते हैं। वे सामान्य से सामान्य आदमी से लेकर साहित्यकार, कलाकार एवं अन्य बड़े विद्वानों तक उनका संपर्क बना रहता है।

---

[2] कथाकार मन्नू भंडारी, ले.अनीता राजूरकर

रचना प्रक्रिया

मन्नू जी के रचना संसार में सबसे पहले 'मौत' नामक की कहानी सामने आती है। जो कलकत्ता में प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'नया समाज' में प्रकाशित हुई। इसके उपरांत इलाहाबाद से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'कहानी' में 'मैं हार गई' छप गई। इस कहानी से भैरव प्रसाद गुप्त और पाठकगण समान रूप से आकृष्ट हुए। बाद से मन्नू जी की जो भी कहानियाँ लिखी गयीं, वे समय समय पर छपती गयीं।

मन्नू जी ने अपनी रचना प्रक्रिया के मामले में 'पंचजन्य' नामक पत्र में लिखा है-"मेरे लिए लिखना दो तरह का होता है। एक वह जो मैं कलम लेकर कागज पर लिखती हूँ और दूसरा वह जो बिना कागज़-कमल में दैनंदिन कार्यों के साथ-साथ बैकग्रौंड म्यूजिक की तरह मन की परतों पर निरंतर ही □लता रहता है।"

आगे चलकर मन्नू जी अपने लिए एक मुख्य बात का स्मरण कर अभिव्यक्त कर बैठती हैं-मेरे लिए तो 'मेरा मानसिक लेखन' ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस की वजह से ही रा मेटीरियल (सामग्री संकलन) का वह भंडार जमा होता है, जिसमें से कुछ चीज़ें चुनकर, उन्हें कांट-छांट कर और तालाश कर तैयार की तरह मैं बाहर लाती हूँ। मन्नू जी द्वारा लिखी गयी रचनाओं की सूची निम्न प्रकार है-

| कहानी संग्रह | प्रथम संस्करण |
|---|---|
| 1. मैं हार गई | सन् 1957 ई. |
| 2. तीन निगाहों की तस्वीर | सन् 1959 ई. |
| 3. यही स□ है | सन् 1966 ई. |
| 4. एक प्लेट सैलाब | सन् 1968 ई. |
| 5. त्रिशंकु | सन् 1978 ई. |
| 6. आंखों देखा झूठ (बाल कहानियाँ) | सन् 1976 ई. |

उपन्यास

1. एक इंच मुस्कान — सन् 1961 ई.
2. आपका बंटी — सन् 1971 ई.
3. स्वामी — सन् 1982 ई.
4. महाभोज — सन् 1976 ई.
5. कलवा (बाल उपन्यास) — सन् 1971 ई.

नाटक

1. बिना दीवारों का घर — सन् 1966 ई.
2. महाभोज (नाट्य रूपांतर) — सन् 1983 ई.

### 1.1.12 विद्वानों की राय में मन्नू

पं.विष्णुकांत शास्त्री ने मन्नू भंडारी के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है-"अनामिका की काफी वर्ष सेक्रेटरी रहने के कारण मन्नू बाई को मैंने देखा है। राजेंद्र यादव का परिचय भी मन्नू भंडारी के पति के रूप में ही हुआ है। मन्नू बाई आवेगमई और छात्रवात्सल्य थीं।"[3]

आर.एन.सिंह ने अपने लेख-'इंडियन लिटरेचर' में लिखा है-"Broad;u speaking women fabulists have not been significantly different from men in their perceptions and practice of the narrative technique. But Mannu Bhandari is markedly a woman writer, she values her feminine feelings and attempts to communicate them without inhibitions to her readers... Bhandari too has distinuguished her self from her contemoraries for her feminine vision, a highly sophisticated sensibility of a 'modern' woman."[4]

---

[3] पं.विष्णु कांत शास्त्री से दिल्ली में हुई भेंट, अनिता राजूरकर

[4] R.S.सिंह, इंडियन लिटरेचर-पृ.133

### 1.1.13 मन्नू का साहित्य:दुनिया की नज़र में

मन्नू भंडारी की कहानियों का अनुवाद देश-विदेश की भाषाओं में अनूदित हुई हैं। पंजाबी में उनकी बीस कहानियों का अनुवाद कर उसका एक संकलन भी निकाला गया है। गुजराती में 'खोटे सिक्के' का तथा मराठी, कन्नड, मलयालम, तेलुगु, सिंधी एवं बंगला भाषा में उनकी कई कहानियों के अनुवाद हो चुके हैं।

विदेशी भाषाओं में भी विशेषतः डच एवं अंग्रेज़ी में भी उनके अनुवाद हुए हैं। उनके सुप्रसिद्ध उपन्यास 'आपका बंटी' का अनुवाद गुजराती में निरंजन सट्टा वाला ने, मराठी में इंदुमती सेवड़े ने तथा अंग्रेज़ी में जयरतन ने किया है। सिंधी, पंजाबी, कन्नड, उडिया आदि भाषाओं में भी उक्त उपन्यास के अनुवाद हुए हैं।

### 1.1.14 मन्नू की कहानियों का मंचन

'महाभोज' उपन्यास का मंचन सबसे पहले बदायूँ में हुआ। उसके बाद रायपुर में हुआ। श्रीमीत अमाल अलाना और प्रेम मटियानी के सहयोग से उन्होंने स्वयं 'महाभोज' का नाट्य रूपांतरण किया और उसे 'राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय' ने बड़े जोश के साथ दिल्ली के मंच पर प्रस्तुत किया। बि.बि.सि.लंदन ने 55 मिनिट 'महाभोज' के नाट्य रूपांतरण को प्रस्तुत एवं प्रसारित किया। 'बिना दीवारों का घर' नाटक का भी मंचन ग्वालियर, दिल्ली, भोपाल, देहरादून, उदयपुर आदि नगरों में हुआ।

मन्नू जी की कहानियों का भी मंचन हुआ। 'अकेली' तथा 'चश्में' नामक कहानियों का मंचन 'अनामिका' संस्था (कलकत्ता) द्वारा किया गया। 'त्रिशंकु' कहानी का मंचन दिल्ली एवं कलकत्ता में हुआ। बाद में इसी कहानी पर राजेंद्रनाथ द्वारा टी.वी. के लिए फिल्म भी बनी। बि.बि.सी. लंदन ने मन्नू भंडारी की रचनाओं पर 14 जुलाई, सन् 1982 ई. में एक 'फीचर' भी प्रस्तुत किया।

### 1.1.15 योजनाएँ भविष्य की

'महाभोज' उपन्यास के उपरांत 'दूसरा कौन सी?' (रचना) वाला प्रश्न सामने आ गया है। वे अपनी आनेवाली कृतियों की रूपरेखा के संबंध में 'पंचजन्य'

नामक पत्र में प्रस्तुत की हैं कि मानसिक रूप से पिछले कुछ वर्षों से एक उपन्यास निरंतर मन में चलता रहता है जिसकी रूपरेखा अब अधिक स्पष्ट होकर उभरने लगी है, जो अब धीरे-धीरे आकार लेने लगी है। पचास के बाद रचनाकारों की जो पीढ़ी जिस समर्पण, उत्साह और जोश के साथ लेखन के क्षेत्र में आयी थी उससे लगता था जैसे लेखन को उन्होंने अपने जीवन का पर्याय ही बना लिया है। यही तीस वर्षों में धीरे-धीरे किस तरह लक्ष्यच्युत हुई और उसके आग्रह प्राथमिकताएँ और मूल्य ही बदल गये। चाहती हूँ कि तीस साल के दौरान विकसित होनेवाली राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के बीच हमारे यहाँ के रचनाकारों और बुद्धिजीवियों की इस घटना को तलाश कर सकूँ।

## 1.2 अब्बूरी छायादेवी का जीवन परिचय

### 1.2.1 जन्म स्थान

साहित्य अकादमी से पुरस्कृत मद्दालि छायादेवी जी का जन्म दिनांकः13 अक्तूबर, 1933 को आंध्र प्रदेश के पूर्व गोदावरी जिला राजमंड्री में हुआ।

माता-पिता की चाह थी कि-"फिर भी घर में बेटा का जन्म हो", जिसके लिए वे सूर्य भगवान की प्रार्थना हमेशा किया करते थे और अपनी माँग जारी रखते थे। बल्कि उनकी प्रार्थना उनकी दृष्टि की कमी के विपरीत घटित हुई। छायादेवी जी का जन्म उनके माता-पिता की भक्ति के अनुरूप ही हुआ, इसलिए उन्होंने सूर्य भगवान की पत्नी का  नाम रखा। उन्होंने अपने चाहत की पूर्ति को छिपाने की कोशिश में छायादेवी जी को लड़के की तरह पाला-पोसा और यहाँ तक कि वेश-भूषा में भी कोई फर्क नहीं।

### 1.2.2 माता-पिता

छायादेवी की माता वेंकटा रमणम्मा जी प्राचीन काल के संस्कारों को महत्व देनेवाली महिला थी। भागवत, रामायण आदि पौराणिक ग्रंथों का अच्छा ज्ञान था। छायादेवी को ‘सुखांतम्’ कहानी लिखने की प्रेरणा उनकी माता से मिली। व्यस्त

छायादेवी की माँ गृहस्थी एवं साधारण महिला है, जो वह हमेशा अपने परिवार के लिए मददगार बनकर रही रही है।

छायादेवी जी के पिता का  नाम वेंकटाचलम है, जिन्होंने बच्चों के प्रति प्यार दिखाने के बावजूद उसके बड़ों के प्रति भक्ति एवं भय की भावनाओं को पैदा की। उनके परिवार में बड़ों के विपरीत कोई गुंजाइश न होने की परंपरा थी। जिसके नाते वह एक भयानक ब्रह्मांड दर्शन दिया करता था। ऐसी स्थिति में छायादेवी जी बहुत भय एवं कंपन के भाव अपने चेहरे पर दर्शाया करती थी। पिता जी पेशे से वकील थे, शायद इसीलिए उनके स्वभाव में क्रोध अधिक हुआ होगा। घर में पिताजी के इजाजत के बगैर कोई भी हिलने का अधिकार ही नहीं था। लड़कियों के प्रति पढ़ाई की दृष्टि कम थी, इसलिए उनके पिता ने बड़ी बेटी इंदिरा को नहीं पढ़ाया।

अनादिकाल से परिवारों में जुड़ी हुई सत्य है कि बेटे अथवा पुरुषों को बढ़ावा दिया गया है और दिया भी जा रहा है, लेकिन स्त्री व बेटी की हालत तो सब से बुरी है। न उच्च कक्षा की सीढ़ियों तक धकेला जाता न ही गैर शिक्षा की रुचियों में प्रेरित किया जाता। ख़ैर उनका परिवार सांप्रदायिक, ब्राह्मण परिवार था। इसीलिए उनमें बाह्याडंबर के विचार दिखाई पड़ते हैं। उनके पिता छायादेवी की कुंडलियों को जानते थे और उसी के फलस्वरूप पढ़ाइ्र की रेखा छायादेवी जी के हाथ में होने के कारण पढ़ाई-लिखाई जारी रखने की आज्ञा मिली।

छायादेवी जी के पिता जी छायादेवी जी के वैयक्तिक इच्छाओं को जानने की कोशिश नहीं करते थे और छायादेवी जी को बोलने की हिम्मत तक तो नहीं थी। अनुशासन के नाम से घर में बातों की गुजारिश तथा हँसी-मजाक इत्यादि का हरण होता था। कहना न होगा कि खाँस माँ के आस-पास घूमने का अधिकार छीन लिया गया।

छायादेवी के मन में पिता के प्रति एक तीख़ी घृणास्पद भाव जग उठी, फिर कभी-कभी वह सोचने लगती है कि वे तो मेरे पिता ही है न? कोई बात नहीं! की भावना सर पर मंडराता रहता है। जो भी हो उनके दिल में एक और बात जीवन भर

में हमेशा के लिए चिंतित रही है-"पुरुषाधिक्य समाज का एक छोटा उदाहरण खुद के ही घर व परिवार में देखना पड़ा।" दरअसल पिता के और आस-पास की कुछ घटनाओं की वजह से ही छायादेवी को स्त्रीवादी लेखन के प्रति आकृष्ट होने का अवसर प्रदान हुआ। परंतु पूर्ण रूप से स्त्रीवादी लेखन पिता की वजह पर नहीं हुआ, मालूम होता है कि छायादेवी जी के जीवन में और उनके आस-पास के परिवेश में घटित घटनाओं का ज्यादा असर है। आज भी वे अपने आस-पास के बुजुर्गों व मेहमानों को अपनी लेखन में छूट नहीं दिया।

पिता वेंकटाचलम पर छायादेवी का मंतव्य है कि-"उनका असर मुझ पर ज्यादा है। वह जो असर अनुकूल भी है और प्रतिकूल भी। कुछ मामलों में उनका व्यवहार मुझे ठीक न लगने पर भी सामंजस्य दिखलाया। अन्यतः कुछ और मामलों में तो मैं उनकी अभिमानी हूँ। वेदांत के विषय में पिता जी का प्रोत्साहन एवं दृढ़-निर्णय इत्यादि का गहरा प्रभाव था। पिता जी मुझ से जिड्डु कृष्ण मूर्ति जी की सारी किताबें पढ़वायीं। पिता जी अब तक मुझे 300 खत लिखे थे। मैंने उनमें से मुख्य एवं अनिवार्य तथा रुचिगत अंशों को चुनकर 'एक पिता की कहानी' के नाम से किताब छपवाई।

पिता का असली नाम तो मद्दालि वेंकटाचलम था। मगर उन्होंने वकील के पद से लौटने के बाद 'नचिकेत' नाम रख लिया। छायादेवी जी पति की सलाह के अनुसार इस किताब को 'नचिकेत' शीर्षक के बदले 'मृत्यंजय' शीर्षक रखा। जिम्मेदारियों से छूट पाकर खुशी की एहसास लेते समय बेटे की मृत्यु की खबर वेंकटाचलम जी को निःसहाय एवं निराशा की ओर ले चली। वे कृष्ण-मूर्ति के रचनाओं के प्रभाव से दुःख को सह लिये थे। उनके आख़िरी दिनों में आँख की रोशनी पूरी तरह कमजोर हो गई थी।

### 1.2.3 भाई-बहन

छायादेवी जी को एक भाई है। उनके भाई का नाम मद्दालि गोपाल कृष्ण, जिसने इंग्लैंड में पीएच.डी. किया। वे रीज़नल रिसर्च लैब्स में सैंटिस्ट थे और वे एक समाजवादी व्यक्ति थे।

इंग्लैंड में शोध कार्य करते समय ही हेतुवाद के प्रति रुचि उत्पन्न हुई। बाद में चलकर इसका प्रभाव सामान्य रूप से छायादेवी जी पर पड़ा। भाई के बारे में छायादेवी जी कहती हैं-"मैंने अपने भाई से एक बात सीखी वो ये है कि-□हाँ तक हो सके किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहिए, अपना काम खुद ही कर लेना चाहिए। खुद सोचना, प्रश्न करना तथा निर्णय लेने का सिद्धांत भी भाई से सीखा।"

भाई गोपालकृष्णा 56 वर्ष की आयु में पद-वियोग से ही पहले चल बसे। यह जो मृत्यु उनकी एक उच्च स्थान की रेखा पर थे तभी हुआ था पहे वे देहरादून में नौकरी किया करते थे, बाद में दनबाद में सेंट्रल प्यूयल रिसर्च इंस्टट्यूट के डेरेक्टर बने। और इसके बाद भारत का सर्व मुख्य एवं प्रदान संस्था **CSIR** के डेरेक्टर के पद पर थे। सेंट्रल प्यूयल रिसर्च इंस्टिट्यूट एक प्रभावशाली एवं प्रभावशाली व्यक्ति की जरूरी को पूरा करने के लिए जब के प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ही स्वयं गोपाल कृष्ण जी को चुना। गोपाल कृष्ण जी का देहांत कलीजे के दर्द से हुआ। वे उनके परिवार एक प्रमुख व्यक्ति हैं, जिन्होंने देश के लिए शोध कार्य में अपना जीवन बिताया है।

बड़ी बहन का नाम इंदिरा है। ये छायादेवी जी से 9 साल बड़ी हैं। इनकी पढ़ाई लगभग पाँचवीं कक्षा तक हुई है। लड़की के लिए पढ़ाई जरूरी न समझने के कारण उन्हें ज्यादा नहीं पढ़ाया। इंदिरा की शादी 14 साल की उम्र में ही हो गई थी। पति किसान थे।

छोटी बहन का नाम यशोधरा है। घरवालों ने जिम्मेदारी को जल्दी से जल्दी ही पूरा करने के प्रयत्न में यशोधरा की शादी तय कर दी। ये तो स्कूल फैनल तक

पढ़ चुकी है। संगीत सिखाया गया, इंदिरा का विवाह एक इंजिनियर के साथ हुआ था।

### 1.2.4 शिक्षा

पढ़ाई के बारे में छायादेवी जी इस प्रकार कहते हैं कि-"मुझे स्कूल जाने का शौक था। मगर घर में इनकार की चुनौती मिली, किंतु ज़िद की वजह से 5 वीं साल में स्कूल जाने लगी। लड़की के नाते अक्षराभ्यास गुनागार मान लिया गया है।" पहले मुझे वीरेशलिंगम गलि में और बाद में अद्देपल्लि जी के प्रेस के पास रहनेवाले मिशनरी स्कूल में प्रवेश करवाया गया, मगर वहाँ धार्मिक शिक्षा के कारण स्कूल से छुट्टी लेनी पड़ी।

8 वीं साल तक घर पर ही पढ़ाया गया और बाद गर्ल्स स्कूल में पाँचवीं कक्षा में भर्ती किया गया, फिर भी वहाँ छुट्टी का और एक चिंगार लग गया। जहाँ पर सीवन तथा हत-कामों को सिखाया जाता था। टौन मिडिल स्कूल में छठी कक्षा में भतीग्र करवाये। 1947 में वीरेशलिंगम हाईस्कूल में स्कूल फैनल हुआ। 14 साल की उम्र में गवर्नमेंट आर्टस कॉलेज में इंटर में भर्ती हुई, इसी समय भारत का शुभ वर्ष था, जिस वक्त भारत स्वतंत्र देश का रूप धारण किया। उसके बाद बी.ए. में राजनीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र को मुख्य विषय के रूप में चुन लिया। भाई एम.जी.कृष्णा जी की सहायता से हैदराबाद के निज़ाम कॉलेज में राजनीतिशास्त्र में एम.ए. किया, उसी समय तेलुगु विद्यार्थी संघ के संयुक्त कार्यदर्शी के रूप में काम किया। शिक्षा के अंतर्गत विवाह के उपरांत मामा जी की सलाह से पोस्ट ग्राड्यूयेट डिप्लोमा इन लैब्ररी साइंस किया।

### 1.2.5 विवाह

आकाशवाणी ने छायादेवी जी को अनेक महामहों का दिलाया। कृष्णाराव के पूछ-ताछ के उपरांत छायादेवी जी पति के सिलसिले को लेकर कहती है- "हँसानेवाला, हँसने के लिए मौका देनेवाला तथा दहेज नहीं लेनेवाला मुझे पति के रूप में चाहत है।" कुछ दिनों के बाद छायादेवी जी का विवाह वरद राजेश्वर राव से

पक्की हो गयी। छायादेवी जी की शादी 1953 अगस्त महीने गोदावरी बाढ़ के समय हुई थी।

शादी के बारे में छायादेवी जी का मंतव्य है कि-"मैं हमेशा इस बात पर गर्व करती हूँ कि मेरी शादी बड़ों के द्वारा तय हुई न होकर मेरे विचारों को तथा मेरे अभिरुचियों को महत्व देकर तय किया गया।" और आगे चलकर छायादेवी जी अपने अंतर्द्वंद्व को खुली आवाज़ देकर इस प्रकार सोचती है कि-घर के रीति-रिवाज के अनुभवों से मुझे लगा कि शादी करने से स्वतंत्रता मिल सकती है। भैया और भाभी को देखकर मुझे वैवाहिक व्यवस्था में सब प्लस पाइंट ही दिखाई दिया था।

उपर्युक्त संदर्भ में कहने का मतलब यह है कि-पहले से जो स्वतंत्रता नहीं मिली, वह शादी के बाद जरूर मिलेगी। पिताजी पर तथा भाई पर निर्भर हुए बिना खुद ही अपनी इच्छाओं को मौका दे सकती है।

### 1.2.6 पति

छायादेवी के पति अब्बूरी वरद राजेश्वरराव जी जर्नलिस्ट थे। उन्हें राजनीति के प्रति अत्यन्त रुचि थी। छायादेवी जी राजनीतिशास्त्र को पढ़ने पर भी राजनीति के प्रति उनकी रुचि नहीं थी। पति के बारे में छायादेवी का विचार है कि-"राजेश्वरराव जी दहेज़ न लेने के कारण ही मैंने उनसे शादी के लिए हाँ कहा। मुझे लेखिका के रूप में उन्नति प्राप्त होने के पीछे उनका प्रोत्साहन ही ज्यादा रहा। बचपन से मुझे हँसने की स्वतंत्रता भी नहीं थी, इसलिए मैंने सोचा कि मुझे हँसानेवाला पति मिलेगा तो अच्छा होगा। जिस व्यक्तित्व को मैंने चाहा वही पति के रूप में मिले, मगर मेधो भेद से मुझ में आत्माविभेद की भावना बढ़ती गई।

मेरे मन में ऐसी इच्छा थी कि मुझे भी कुछ करके दिखलाना है और अपने व्यक्तित्व को साबित करना है। विवाह के बाद वरद राजेश्वरराव मित्रगण श्री श्री, आरुद्र, कंदुर्ति, अजंता आदि से छायादेवी जी का परिचय हुआ। 1954 में वरदा जी 'कविता' नामक पत्रिका को शुरुआत करके, छायावादी जी को संपादन का उत्तरदायित्व सौंपा। 1955 में वरदा जी बिर्लस संस्थान में अधिकारी के रूप में

काम किये थे और बाद सिरपुर पेपर मिल में काम किये थे। छायादेवी जी मुख्य रूप से पति की सहायता से पोस्टग्राड्यूएट इन लैब्रेरी सैन्स की। वरदा जी दिल्ली में मोडरन इंडियन पोस्ट्री आंथालजी किये थे। उन्होंने सभी भारतीय भाषाओं में लिखी गयी कविताओं का अनुवाद का प्रकाशन किया। वे इन आंथालजी को प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू जी के जन्मदिन के अवसर पर 1958 नवंर, 14 को उपहार के रूप में प्रदान किये। उसके पहले हैदराबाद में वर्ष 1956 में मोडरन तेलुगु पोयट्री नामक एक छोटी सी आंथालजी लाये थे। 40 पृष्ठों का वह किताब सी.आर.मंडी के द्वारा इलस्ट्रेटेड वीक्ली आफ इंडिया में समीक्षा की गयी।

उसके बाद वरद जी इंडियन कौंसिल पर ‘कल्चरल रिर्लशन्स’ में काम किये थे। छायादेवी जी पति की सहायता से रक्षण शाखा के ग्रंथालय में नौकरी किये थे। बाद में वरद जी दिल्ली में आल इंडिया पब्लिषर्स में एडिटर इन चीफ के रूप में रहे। वे एक तरह के सटिल डिक्टेटरशिप थे। वे हमेशा यही चाहते थे कि उनकी अपनी भावनाओं और रुचियाँ ही उन्नत है और दूसरे भी उन्हीं का अनुसरण करें। छायादेवी की श्रीमती उद्योगिनी कहानी में इसी विषय को प्रस्तुत करते हुए कहती हैं कि उनको ह्यूमरस जैसा बात करने की आदत है। वरदा जी के चल बसने के बाद लिखी गई छायादेवी जी की पुस्तक ‘वरदस्मृति’ में इन संपूर्ण जीवन वृत्तांत की झलक मिलती है।

### 1.2.7 पेशा

1959-61- यूनाइटेड सर्विस इंन्स्टिट्यूशन आफ इंडिया लाइब्रेरी (नई दिल्ली)

1961-72- इंडियन स्कूल ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज लाइब्रेरी।

1972-82- जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी में डिप्यूटी लाइब्रेरियन के रूप में।

1982 से- खुद नौकरी से इस्तीफा

1976-77- नौकरी की ओर से फ्रांस यात्रा-डाक्यूमेंटेशन स्टडी के लिए।

### 1.2.8 रचना प्रक्रिया

पहले पाठ्य पुस्तक के माध्यम से ही छायादेवी जी को साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न हुई। श्री पाद सुब्रह्मण्य शास्त्री जी के उपन्यास, वेदुला मीनाक्षी देवी जी की कहानियाँ, आर.के.नारायण स्वामी अंड फ्रेंड्स उन्हें पसंद है। तभी उन्हें यह मेहसूस हुआ कि कहानियाँ नित्य जीवन के आधार पर लिखी जा रही हैं, कल्पना के आधार पर नहीं। वे हमेशा सोचती थीं कि हम से देखा हुआ, दिल को छुआ हुआ संदर्भ कहानी के रूप में प्रस्तुत किया जाय तो अच्छा होगा, लेकिन उन्होंने कोशिश नहीं की। भाभी रुक्मिणी जी तो सृजन कार्य किया। आंध्र पत्रिका तथा अन्य पत्रिकाओं में भाभी की रचनाएँ छपती थी। भाभी जी 'मद्दालि रुक्मिणी गोपाल' के नाम से रचनाएँ करती थी। इस तरह छायादेवी जी को साहित्य सृजन की प्रथम प्रेरणा भाभी रुक्मिणी गोपाल से मिली। रुक्मिणी जी अनेक पत्र-पत्रिकाओं को पढ़कर छायादेवी जी से चर्चा करती थी। उसी तरह छायादेवी जी कुछ पढ़ी तो भाभी से चर्चा-प्रतिचर्चा करती थी। इस तरह उन्हें कहने और समझने की आदत ने लेखन कार्य को जन्म दिया।

छायादेवी जी भाभी को लिखते हुए देखकर मन-ही-मन सोचती थी कि क्या मैं नहीं लिख सकती? इसी उत्पन्न भावना से कहानी लिखना शुरू कर दी। छायादेवी जी एम.ए. पढ़ते समय तेलुगु विद्यार्थी संघ के संयुक्त कार्यदर्शी के रूप में कार्यरत थी, उसी समय 'मद्दालि छायादेवी' के नाम से पहली कहानी 'अनुबंदम' 1952 निजाम कालेज की पत्रिका 'विद्यार्थी' में छपी थी। परिवार में पुरुष का आधिपत्य और स्त्री का संतोष तथा चुनौतियों को याद दिलानेवाली कहानी है। यह उनके पिताजी के ऊपर लिखी गयी कहानी है, जिसमें उनके नियंत्रण का स्वभाव दर्शाया गया। उसके 1954 जुलाई, 16 'तेलुगु स्वतंत्र' पत्रिका में 'आलोचकों' (विमर्शकुलु) नामक कहानी छपी है। पहली दशा में ही छायादेवी अपने लेखन कार्य में एक साल का विराम लिया। आम लोगों की तरह जब चाहे तब नहीं लिख सकती है। उनके अंतर्मन के विचार, कहने और लिखने की इच्छा हुई तो ही लेखन कार्य

करती हैं। अनजाने और जाने पाठकों से अपने भावों, विचारों और वेदनाओं को बाँटने के लिए ही अपना लेखन कार्य करती हैं। कहानियाँ नारी जागरण से लिखी हुई तो हो सकती है मगर स्त्रीवाद तथा पुरुष द्वेषी जैसी तीव्र भावनाएँ उनमें नहीं। वे कहती हैं कि समाज में स्त्री-पुरुष के अच्छे संबंध हों और आपस में दोनों के बीच समझौता जरूरी कहकर 'सेन्स आफ ह्यूमर' को प्रमुख मानती हैं।

नारी जागरण से कहानियाँ शुरू करके आगे बड़ी हुई मद्दालि छायादेवी बाद में अब्बूरी वालों की बहू बनकर अब्बूरी छायादेवी बन गयी। छायादेवी ने कहानियाँ, कविताएँ, निबंध एवं यात्रावृत्त लिखी हैं। आंध्रायुवति मंडल वालों की 'कविता' नामक मासिक पत्रिका का संपादन का कार्य भी किया है। पत्रिकाओं में कालम्स भी लिखा करती थीं। रेडियो टाक्स किये थे। पुस्तक संकलनों का संपादन कार्य भी किया। बाद में कुछ दिनों में अब्बूरी ट्रस्ट को शुरू करके किताबें छपवायीं।

चाहे कुछ लिखे, चाहे कुछ करे तो भी उन्होंने स्त्रियों की मानसिक कुंठा पर ही की थी। मानव जीवन की सहज घटनाएँ तथा वास्तविक विषयों को ही लेकर कहानियाँ लिखी थीं। उन्होंने कभी भी जीवन की वास्तविकताओं को छोड़कर कलम पर सवारी नहीं की। सब घरों में हमारे आसपास में घटित होनेवाले विषयों को ही लिखती हैं। उस तरह के सबूत एवं यथार्थ सृजन से ही इतनी ख्याति प्राप्त हुई।

छायावादी की 50 साल की उम्र में 50 कहानियाँ भी नहीं लिखीं। लेकिन उनकी सब कहानियाँ जिंदगी से ही निकली हैं, नित्य जीवन में छोटी घटनाएँ, मधुर क्षण, नाजुक संदर्भ आदि उनकी पूरी कहानियों में दिखाई देते हैं। उनकी भाषा सरल है। शैली निराडंबर और मध्यवर्ग ब्राह्मण परिवारों में बात की जानेवाली जैसी सहज होती है। जीव नदियों को प्रवाह देनेवाली मार्ग जैसी पहले से ही आचरण में लाती है।

कुछ लोग वार्तालाप लिख कर छोड़ देते हैं। मगर 'वह ऐसा कहा था', 'ऐसी कही थी' □ैसे वाक्य की पूर्ति करती हैं। वे ज्यादातर वर्णन की ओर अपना ध्यान केंद्रित नहीं करती हैं। कहानियों में कहीं भी बेकार पात्रों का चित्रण नहीं करती हैं।

कहानियों में कुछ पात्र को ‘मैं’, ‘वे’ जैसे लिखती हैं। उन्होंने कहनेवाले विषय को कठिन रूप से कहे बिना साफ-साफ कहने की आदत डाल ली है। भाषा के संबंध में वरद राजेश्वरराव जी के पास बहुत सारे विषयों को सीखा। वे तेलुगु में सोचकर तेलुगु में ही लिखती हैं।

<u>कहानी संग्रह</u>

अब्बूरी छायादेवी कहानियाँ-1991

अपना रास्ताःअब्बूरी छायादेवी कहानियाँ-2002

मृत्युंजय-1993

<u>अनुसरण</u>

अंग्रेजी से-1955

(विविध देशों की लोक गाथाएँ बच्चों के लिए)

अपरिचित लेख, अन्य कहानियाँ (स्टैफान स्त्वैक कहानियाँ) 1956, 1998

<u>निबंध संग्रह</u>

निबंध चित्र-1995

चित्र बनाना-1996

हमारी समस्याएँ-कृष्ण जी समाधानें-1997

स्त्रियों का जीवन-जिड्डु कृष्ण मूर्ति-1998

बात की मदद-नव्या कालम-2006

<u>अनुवाद</u> (अंग्रेज़ी से)

हमारी जीवनियाँ-जिड्डु कृष्ण मूर्ति व्याख्यानें-1998

गांधी की दृष्टि में कोढ़ी-2006 (सी.जे.अप्पाराव के साथ)

यात्रा □रित्र-चैना में छायाचित्र

<u>संकलन</u>

कविता पत्रिका-1954

वनिता (मासिक पत्रिका आंध्र युवति मंडलि की ओर से-1956

मॉर्डर्न तेलुगु पोयेट्रि (अंग्रेज़ी अनुवाद संकलन)-1956

वरद स्मृति (शीला वीर्‌राजु, कंदुर्ति सत्य मूर्ति सह संपादक गण)-1994

20 वीं शताब्दी में तेलुगु रचइत्रियों की रचनाएँ (केंद्र साहित्य अकादमी प्रचुरण-2002)

कथाकोश (सह संपादक के रूप में) 2006

### 1.2.9 अन्य विशेष

1. विविध पत्रिकाओं में कालम्स-निर्वाह-कभी-कभी उद्‌यम, आंध्र ज्योति, आंध्र प्रभा, भूमिका, नव्या आदि।
2. विविध कहानियाँ अंग्रेज़ी, हिंदी आदि भाषाओं में एक कहानी स्पानिष में अनुवाद हुए। वे सब विविध संकलनों में रखे गये।
3. ‘बोनसाय जीवन’ कहानी 10 वीं कक्षा (तेलुगु दूसरी भाषा) की पाठ्‌य पुस्तक में रखी गयी। इस कहानी का अंग्रेज़ी अनुवाद आंध्रा में, कर्नाटक में, इंटरमीडियेट विद्यार्थियों के लिए पाठ्‌यांश के रूप में ‘उडरोज़’ कहानी का अनुवाद राजस्थान में इंटरमीडियेट विद्यार्थियों के लिए पाठ्‌यांश के रूप में।
4. केंद्र साहित्य अकादमी जनरल कौंसिल नेतृत्व 1998-2002, 2002 में अकादमी द्वारा भेजे गये बृंद में चीन पर्यटन (15 दिन तक)

### 1.2.10 पुरस्कार

1. वासिरेड्‌डी रंगनायकम्मा साहिती पुरस्कार-तेलुगु विश्वविद्यालय-1993
2. श्रीमती सुशीला नारायण रेड्‌डी साहिती पुरस्कार-1996
3. पोट्‌टि श्रीरामुलु तेलुगु विश्वविद्यालय की तरफ से ‘रचइत्री उत्तम रचना पुरस्कार’-मृत्युंजय उपन्यास-1996
4. अभिनंदन-दुर्गाबाई देशमुख पुरस्कार (साहित्य)-1997
5. कलासागर-पंदिरि साहित्य पुरस्कार-2000
6. पुलिकंटि साहिती सतकृत पुरस्कार-2004
7. केंद्र साहित्य अकादमी पुरस्कार-2005

8. श्री पी.वि.नरसिंहाराव मेमोरियल पुरस्कार-2006

### 1.2.11 व्यक्तित्व

रहन-सहन, आचार-विचार को जरूर पालन करनेवाले सांप्रदायिक परिवार में पैदा होकर, स्थिर से आगे बड़ा छायादेवी, किस्मत की वज़ह से उच्च शिक्षा प्राप्त करके, नौकरी भी कर पायी। उस प्रस्ताव में उसकी सामना की हुई अनुभव उनमें बहुत सारे प्रश्न उठाये। प्रश्न करने के बावजूद, सामना करने की हिम्मत न कर पाने के कारण एक ओर बड़ों के प्रति, आचार व्यवहारों के प्रति गौरव, दूसरी ओर अपनी इच्छाओं के संबंधित जिद, इन दोनों के बीच घिसकर उन्होंने साहित्य से दोस्ती की। अपने विचारों को अक्षर रूप देकर वे जो कहना चाह रही थी कह पायी। लड़की मुँह को खोल के हँसना ही पाप समझनेवाले नेपद्य से स्त्रियों की अंतरंग को प्रतिबिंबित करनेवाली रचयित्री के रूप में उनकी बढ़ोत्तरी की मिसाल कौतूहल पूर्ण है।

वह जिस परिवार में पाली गयी, उसमें मन खोल कर स्वतंत्रता से किसी से कह सकने की स्थिति नहीं रहती थी। किस के साथ मैत्री से रहना है, वह उनके मन के मुताबिक नहीं, परिवार के बड़े लोग, सामाजिक नियम, संप्रदायों आदि से निर्देशित किए जाते थे। वैसा ही रहना पड़ता था। घर के नियंतृत्व वातावरण में ही बड़ी हुई। आचार व्यवहार में पिताजी कुछ हद तक प्रगतिशील पक्की ठहरती थी, अन्य जाति के दोस्त घर आने से माँ उन्हें, अलग श्रेणी भोजन आदि परोसती थी, अगर छाया जी उन्हीं के घर जाती हैं तो इन्हें उनके घर में पकायी हुई कुछ भी खाये बिना, कोई-न-कोई फल खाना पड़ता था। इन्हें हमेशा यही चिंता होती थी कि दोस्त इनके बारे में क्या सोच रहे होंगे। मगर नियमों का अतिक्रमण करने का धैर्य उनमें नहीं था।

सांप्रदायिक परिवार तो है, मगर दिव्य ज्ञान समाज का प्रभाव है। उनमें पिता लड़के को देखते थे। वस्त्र धारण, केशालंकरण भी लड़के के जैसे ही करवाते थे, लेकिन स्कूल जाकर पढ़ाई तो निषेध है। उन्हें तो लड़की जैसा वस्त्र धारण करना ही पसंद है। जिद करके किसी-न-किसी तरह से 5 वें साल में पाठशाला गयी थी। दोस्त रहने पर भी उन्हें समझनेवाले तो कोई नहीं थे। अनजोन विचार, किसी-न-

किसी से बांट लेने की तमन्ना उनमें थी। विद्यार्थी दशा में ही रेडियो कार्यक्रम सुनने की प्रेरणा ने एक अंग्रेज़ी नाटक को तेलुगु में अनुवाद करने के लिए मजबूर की। 'पेंपकम्' नामक नाटक लिखी थी। वह पिता के नियंतृत्व व्यवहार से संबंधित है। भाभी रुक्मिणी गोपाल की प्रेरणा से कहानी लिखना शुरू किया।

शादी के पहले पिता के अधीन में रहने के कारण उन्हें जो स्वतंत्र अभिव्यक्ति में, आर्थिक रूप में न होने के कारण उनमें यह आशा पैदा हुई कि शादी होने से स्वतंत्र मिल सकती है। सोचती थी कि अपने भाई जैसे आधुनिक विचारों वाला अगर पति के रूप में मिल गया तो स्वतंत्रता जरूर मिलेगी। बचपन से हँसने की भी स्वतंत्रता नहीं थी, इसलिए उन्होंने सोचा कि हँसानेवाले पति मिलते तो अच्छा होता। सभी तरह से ठीक वैसा ही जैसा वे चाहतीं थी उसी व्यक्तित्ववाला पति के रूप में मिल गया। मगर और कुछ असंतुष्टि। दिमाग में भिन्न-भिन्न सुझाव एवं क्षमताओं के कारण उनमें आत्मन्यूनता का भाव बढ़ जाता था। उनमें मुझे भी कुछ करके दिखाना है की भावना बलवती हो रही थी।

अपने से ज्ञानवान पति की कही हुई को ही वेद नहीं समझतीं। कई संदर्भों में नौकरी के माध्यम से आर्थिक हैसियत पाने पर भी उन्हें कई विषयों में स्वतंत्रता न मिलने के संदर्भ को लेकर दुखी होना पड़ा।

उनमें स्मरण शक्ति कम है। उसी को वे अपने माइनस पाइंट समझती हैं। मगर सोचने की शक्ति बहुत ज्यादा है। जोर से दूसरों के सामने बात नहीं कर पाने वाली उन्हें प्राध्यापिका-नौकरी ठीक नहीं समझकर लाइब्रेरी साइंस पढ़वा कर नौकरी करने के लिए पति ने प्रोत्साहित किया। बदले की भावना, चारों में हिम्मत से बात करना आदि उनके बस की भावना, चारों में हिम्मत से बात करना आदि उनके बस की बात नहीं थी। इसीलिए वे अपने विचारों को कहानियों के माध्यम से लिखती थीं। वे चाहे पारिवारिक संबंधों, चाहे सामाजिक संबंधो ंको आलोचना करके कहीं भागे बिना उन्हें वृद्धि करने की कोशिश करती थीं। इन्सानों में अंतर दृष्टि, स्वयं अवगाहन में बढ़ोत्तरी कर देना ही उनकी कहानियों का लक्ष्य है। वे पुरुष के खिलाफ नहीं। अपने

चारों तरफ की स्थितिगतियाँ, बड़ों का नियंत्रण आदि ही उन्हें गंभीर मामले लगते थे।

इतना ही नहीं वे स्वतंत्र रूप से चित्र लेखन, गुडियाँ बनाना सीख ली। उनसे बनाई हुई कई गुडियाँ एवं चित्र-लेखन साक्षात्कार के अवसर पर मुझे देखने को मिले। कहानीकार के रूप में, अभ्युदय रचयित्री के रूप में उन्होंने जितना नाम कमाया है, अच्छी रुचि के साथ गुडियाँ बना सकनेवाली, कलाभिमानी के रूप में भी उतना ही नाम कमाया है।

वे चाहे कहानी लिखें, चाहे नाटक, चाहे निबंध लिखें, चाहे गुड़ियों को प्राण देने में, काल की घड़ी पर प्रति-दिन श्रम की जीव नदी जैसा ही जीती हैं। मनुष्य के प्रति वे दिखानेवाली ममता अद्वितीय है। अगर उनके व्यक्तित्व की पहचान ढूँढ़ने की जरूरत पड़ेगी तो उनकी कहानियों में ही ढूँढ़ना चाहिए। क्योंकि चाहे वे कहानी लिखें, निबंध स्फुटित करें, रेडियो प्रसंग दें, सभी जीवन से ही उत्पन्न हैं।

स्वतंत्रता के 14 साल पहले पैदा होकर, पुरुषाधिपत्य आँखों से देखकर, स्वतंत्र रहित बाल्य बिता कर कट्टर सांप्रदायिकता में पलकर, बड़ी होकर एक ओर पढ़ाई को आगे बढ़ाते हुए अपने विचार, दृक्पदों को इकट्ठा कर बनाए हुए, दूसरी ओर मध्यवर्ग ब्राह्मण परिवार की स्त्रियों की दयनीयता और एक ओर नौकरी व्यवस्था में स्त्रियों के द्वारा सामना की जानेवाली समस्याओं को आँखों से देखते हुए उन सभी को अपनी रचनाओं को उत्पादक वस्तुओं के रूप में बदलते हुए दूसरों से प्रभावित हुए बिना, खुद सामने विश्वनाथ, चलम, कोकु, गोपीचंद जैसे महान रचनाकार होने पर भी अपनी एक वैयक्तिक शैली एवं पहचान के साथ लगे रहना खुद को अधिक आश्चर्य में खींच ले जाती है।

* * *

# अध्याय-II

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों का अंतर्बोध

2.1 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक अंतर्बोध

2.2 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में पारिवारिक अंतर्बोध

2.3 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक अंतर्बोध

2.4 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में राजनैतिक अंतर्बोध

# अध्याय-II

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों का अंतर्बोध

## 2.1 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक अंतर्बोध

मन्नू भंडारी की कहानियों में सामाजिक अंतर्बोध मुख्य रूप से उनके जीवन से ही संबंधित निकट और यथार्थ का रूप है। मन्नू भंडारी की कहानियाँ तीन स्तरों में दिखाई देती हैं। उनकी प्रारंभिक कहानियों में घटना या प्रसंग का समावेश है। वे व्यक्तिगत और आत्मकथ्य के रूप को लेकर चलती हैं और साथ ही वर्णनात्मक हुआ करती हैं। उसके बाद दूसरा स्तर यह है जहाँ सामाजिकता का प्रवेश होता है तथा तीसरे स्तर की कहानियों में व्यंग्यात्मकता का आगमन होता है।

अब्बूरी छायादेवी एक महिला कहानीकार होने के नाते अपनी कहानियों में वर्तमान नारी की खुल कर व्यक्त की है। छायादेवी के कथा-साहित्य का एक तिहाई भाग समाज के यथार्थ का अंतर्बोध कराता है। उनकी कहानियाँ सीधी एवं सरल हैं। छायादेवी जी की रचनाओं की विशिष्टता है, उनके वास्तविक अनुभव एं जीवन सत्य है। यह आसपास समाज और परिवेश से प्राप्त है, जो हित-अहित से जुड़ा हुआ है। इस यथार्थपरक सत्य को उन्होंने एक नवीन और स्वस्थ दृष्टिकोण से सृजित किया है।

वास्तव में सामाजिक अंतर्बोध के अंतर्गत समाज के मुख्य विषय समाहित होते हैं। 'नशा' समाज का एक कटु यथार्थ है। सामंती व्यवस्था में शराब का अत्यन्त बोलबाला था जिस समय राजा-प्रजा के कोई लक्ष्य न थे और वे सब मस्ती

में, नृत्य-गान में तथा शराब पीने में व्यस्त थे। आजकल शराब और ड्रग्स लेने की संख्या कहीं कम तो न हुई। जिससे समाज एवं परिवार बाधक हैं, परिवार की समस्या तो समाज से दुगुनी है। जैसा कि परिवार में वे अपना हक जताते हैं। परिवार में मार-पीट, गाली-गलोज़, हत्याएँ साधारण बन गयी हैं। इसी समस्या पर मन्नू भंडारी की लिखी गयी 'नशा' कहानी प्रासंगिक है।

'नशा' कहानी की मूल समस्या शराब है। इसी वजह से बाप और बेटा, पति और पत्नी के बीच दूरियाँ आ जाती हैं। सामाजिक अंतर्बोध की दृष्टि से मन्नू भंडारी की 'नशा' कहानी श्रेष्ठ है। अनादिकाल से चली आ रही स्त्री के प्रति पुरुष और समाज की दृष्टि को मन्नू की 'नशा' कहानी तथा अब्बूरी की 'सति' कहानी पर्दाफाश करती है। युग बदल रहा है, पीढ़ियाँ बदल रही हैं, लेकिन नारी की स्थिति तो जैसा का तैसा ही है। नारी के प्रति समाज तथा पुरुष की दृष्टि भी नहीं बदली। नशाखोरी जैसी सामाजिक बुराई का चश्मा आज भी विद्यमान है। इस मुद्दे पर चर्चा करते समय प्रायः लोग नशाखोरी की रोकथाम के लिए सख्त कायदे कानून बनाने और उन्हें लागू करने की जरूरत पर बल देते हैं। किंतु सरकारी नियम तथा कानून के द्वारा नशाखोरी को लेकर लड़ना एक बात है और साहित्य सृजन के क्षेत्र में इस समस्या से रचना के स्तर पर चित्रित करना बिलकुल भिन्न है। नशाखोरी के चलते उत्पन्न घिनौने सामाजिक यथार्थ को अंतर्बोध करते हुए भी सहज मानवीय संवेदना को नज़र अंदाज किया है। कहना यह है कि घृणास्पद सामाजिक स्थितियों के चित्रण के बावजूद कहानीकार उस शाश्वत मानवीय संवेदना को रेखांकित करना नहीं भूलतीं। जिसमें किसी भी कहानी की रचनात्मक शक्ति निहित हुआ करती है। बच्चों का नाम लेते ही मासूमियत का एहसास होता है। लेकिन आजकल के समाज में इसके विपरीत अनेक घटनाएँ घटित हो रही हैं। इसका प्रत्यक्ष सबूत 'नशा' कहानी है। कहानी 'नशा' में किशन शराबी बाप का शिकार बन जाता है। समाज में शराबी नशे में मासूमियत, पारिवारिक बंधन की मिठास, गौरव, लालित्य, सहनशील आदि गुणों को महत्वहीन बना देता है। किशन में पिता के प्रति प्रेम के बदले डर एवं द्वेष का

भाव उत्पन्न होता है। यह सामाजिक सत्य है कि जब भी कोई बचपन में घर छोड़कर भाग जाता है तो वह फिर से अपनी आत्मीय बंधन के लिए वापस जरूर आता है। ठीक उसी तरह किशन अपनी माँ की आत्मीय बंधन एवं प्रेम के लिए वापस आता है न कि पिता के लिए। यहाँ पिता बेटे के लिए एक दुश्मन की भूमिका निभाता है। 'नशा' कहानी के नितांत भिन्न स्थिति को मन्नू भंडारी 'रानी माँ का चबूतरा' कहानी में चित्रित करती हैं। नायिका 'गुलाबी' एक कर्मठ स्त्री है। मन्नू जी की 'नशा' कहानी की 'आनंदी' अंत तक शराबी पति पर सहानुभूति दिखाती है तो उसके नितांत भिन्न 'गुलाबी' अपने शराबी पति को झाड़ू मारकर घर से निकाल देती है। इस तरह एक भिन्न सामाजिक अंतर्बोध की जटिता के सरलीकरण को मन्नू भंडारी की 'रानी माँ का □बूतरा' कहानी में लक्षित किया जा सकता है। जाहिर है कि अंधविश्वास हमारे सामाजिक जीवन का यथार्थ है और ध्यान देने से यह बात पता चलती है कि इस सबसे ज्यादा ग्रस्त वे लोग होते हैं जो समाज के सबसे निम्न श्रेणी के हैं। प्रायः उच्च वर्ग या मध्य वर्ग के वे लोग शिक्षा-दीक्षा की वजह से ज्यादा जागरूक हुआ करते हैं। चूँकि इसकी कमी सबसे ज्यादा निम्न वर्ग में होती है। इसलिए वह विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों का शिकार होता है। यदि ठीक से मूल्यांकन किया जाए तो हर श्रेणी में कोई-न-कोई अंधविश्वास जरूर दिखाई देता है जिसके सामुदायिक कारण होते हैं। पर निम्न वर्ग को अपने अंधविश्वास की जितनी कीमत चुकानी पड़ती है, उतनी शायद अन्य नहीं। इन सामाजिक अंधविश्वासों के साथ एक स्त्री दूसरी स्त्री के जीवन में किस प्रकार कष्ट पहुँचाती है इस कहानी से पता चलता है। कहने के लिए हमारा समाज आधुनिक समाज है मगर कुछ विषयों में जनता के अंदर बदलाव नहीं आया है। यह विषय 'गुलाबी' नामक पात्र द्वारा पता चलता है।

हमारे भारत देश की जनता में भक्ति की भावना ज्यादा है। शायद इस कारण ही अनेक मंदिरों की स्थापना हुई है। विदेशी हमारे भारत वासियों को देखकर यह सोचने लगते हैं कि धर्म के नाम पर यहाँ के लोग एक प्रकार का व्यापार कर रहे हैं। अगर उदाहरण के लिए किसी गरीब व्यक्ति के परिवार में पैसों की कमी है तो घर में

बैठकर या मंदिरों में जाकर प्रार्थना करने से वह समस्या हाल हो जायेगी क्या? हाँ प्रार्थना से मन को शांति मिलेगी। यह तो यथार्थ है शायद इसलिए विदेश के बालक वर्ग 15 साल की उम्र से मेहनत करना शुरू कर देते हैं। एक तरफ पाश्चात्य की सभ्यता कुछ विषयों में सही है। वहाँ किसी के कष्ट में कोई बाधा नहीं पहुँचाता। विपरीत दृष्टिकोण को 'गुलाबी' के जीवन में देख सकते हैं।

गाँव आज भी मध्यकालीन परिवेश में साँस ले रहा है। वहाँ आज भी अशिक्षा, अंधविश्वास, बेकारी और भुखमरी सुरक्षा की तरह मुँह बाये खड़ी है। हज़ारों गुलाबियाँ और उनके बच्चे इस दम घोंटू वातावरण से मुक्त होने के लिए छटपटाते हुए दम तोड़ रहे हैं। स्वतंत्रता के बाद गाँव जागा अवश्य है, पर जागृति के इस दीप को बुझाने के लिए वहाँ आज भी कई प्रकार की विपरीत हवाएँ चल रही हैं। नये-पुराने का एक वैचारिक संघर्ष चल रहा है जिसमें उस अकेले व्यक्ति को भोगना पड़ता है जो जागा हुआ है, प्रगतिशील है और जो तटस्थ रहकर स्वाभिमान के साथ जीना चाहता है। गाँवों की वह जीर्ण और अंधी पीढ़ी जगे हुए व्यक्ति के विरुद्ध प्रवाद फैलाने में विश्वास करती है। उसके पास प्रवादों के बड़े घातक और पैने हथियार हैं, जिन्हें वह बिना विचार प्रयोग में लाकर व्यक्ति के स्वाभिमान पर निंतर चोट करती है। प्रगति के मार्ग में इस हद तक अवरोध पैदा करती है कि व्यक्ति टूटकर बिखर जाए, दम तोड़ दे। मौत की पूजा और जिंदगी का माखौल जो हमारे चरित्र की आदिम विशेषता है, लेखिका ने इस कहानी में अत्यन्त ही संवेदनात्मक ढंग से उभार कर सामने रखा है।

स्त्री-पुरुष के बीच जो अगाध है, उसे मिटाना मुश्किल बनता जा रहा है, क्योंकि जन्मतः स्त्री पुरुष के बीच भेदभाव न होने पर भी, स्त्री को स्त्री की तरह, पुरुष को पुरुष की तरह यह समाज, परिवार तथा व्यवस्था बना रही है। स्त्री शिक्षा आजकल अनिवार्य बन गयी है। ताकि शिक्षा द्वारा स्त्री परिवार में तथा समाज में खुद की पहचान बना सकती है। शिक्षित स्त्री आर्थिक तौर पर और विचार के तौर पर स्वतंत्र बनने की चेष्टा की है। स्त्री शिक्षा सिर्फ उसके लिए ही उपयोगी ही नहीं,

समूचे परिवार के लिए भी उपयोगी होगी। क्योंकि हमारे देश में पितृसत्तात्मक व्यवस्था होने पर भी परिवार में माँ का ही अपना विशिष्ट स्थान तथा पहचान है। इसी बात को लेकर चलती है, अब्बूरी छायादेवी की 'बोनसाय जीवन' कहानी। स्त्री जितनी शिक्षित होने पर भी, आजकल जीवन से संबंधित मुख्य विषयों में निर्णय लेने के लिए तो नहीं कम-से-कम विचार करने की स्वतंत्रता उसे नहीं मिल रही तो दूसरी ओर बहुत पहले ही चली आ रही पितृसत्तात्मक व्यवस्था से डर के मारे दबे होने के कारण अपने विचारों को खुल कर व्यक्त नहीं कर पा रही है। चाहे वह पढ़ाई के संबंध में हो या विवाह के संबंध में या अन्य कोई छोटे-मोटे विषय क्यों न हों, यह स्थिति वहीं की वहीं है। इसी हालत में तड़पती है, मन्नू भंडारी की 'एक कमजोर लड़की की कहानी' की रूप।

आधुनिक मानव अपनापन और भावनाओं को खोकर दूसरों के लिए जीने के लिए या बहाना कर रहे हैं। वह खुद के लिए नहीं दूसरों की प्रशंसा के लिए तड़पता है, ठीक इसी मानसिकता को प्रतिबिंबित करती है, मन्नू भंडारी की 'जीती बाजी का हार' तथा अब्बूरी छायादेवी की 'नलुगुरि कोसम' कहानी। आधुनिक मानव की मानसिकता इतनी बिगड़ गयी है कि वह अपने परिवार के सदस्य गुजर जाने पर चाहे वह पति हो या और कोई, वह मन से अपनी दुःख प्रकट करने के लिए तैयार नहीं है। लेकिन उन्हें परामर्श करने के लिए आये हुए लोगों को देखकर रोने का बहाना कर रहा है तो कुछ लोग अपनी इच्छा विरुद्ध दूसरों की प्रशंसा पाने के लिए अपनी जिंदगी को दाव पर लगाने के लिए भी तैयार हो जाते हैं, लेकिन आखिर में पछताते हैं।

आजकल की सामाजिक और आर्थिक स्थितियाँ इतनी बदल गयी हैं कि पैसे कमाने का जरा से भी मौके का इस्तेमाल करने पर लोग तुले हैं। लेकिन गरीब आदमी तो वहीं के वहीं है, उनकी स्थिति में तो कोई बदलाव नहीं आया। सिर्फ अमीर लोग ही दिन-ब-दिन अमीर होते जा रहे हैं और मकान पर मकान बनाते जा रहे हैं। इन्हीं सामाजिक विसंगतियों को प्रतिबिंबित करती है मन्नू भंडारी की 'सज़ा' तथा

अब्बूरी छायादेवी की ‘मौका’ कहानी। भ्रष्ट व्यवस्था आसानी से ईमानदार व्यक्ति को आरोपों के कठघरे में खड़ा करती है। समाज न सिर्फ उस आरोपित व्यक्ति को गिरी हुई नज़र से देखने लगता है। फलस्वरूप समाज से रिश्ता कट जाने से पूरा परिवार एकाकीपन, अपमान तथा निंदा की सजा भोगने के लिए विवश होता है। न्याय व्यवस्था न्याय देने में विलंब करती है और न्याय मिलने तक पूरा अन्याय हो जाता है अर्थात् निर्दोष रिहा तो किया जाता है परंतु तब तक समूची भ्रष्ट व्यवस्था के फलस्वरूप अंतहीन यातनाओं को सह सहकर ऐसी अभिशप्त स्थिति में पहुँ□ □ाता है जहाँ जीवन के सर्वोच्च आनंद के क्षण भी उसे सच्चा सुख दे पाने में असमर्थ हो □ाता है। जरा सा भी मौके को इस्तेमाल करनेवाले व्यापार दृष्टिवालों के लिए युद्ध भी अच्छे मौके हैं। कर्फ्यू के समय में पैसे कमाने की लालच में इन्सान की दृष्टि बदल जाने से सामान्य मानव की हाल-चाल तथा गरीब लोगों की स्थिति तो बिगड़ जाती है।

समाज शास्त्री को अकेले जीने नहीं देती, हमेशा किसी-न-किसी रूप से उसे तंग करती रहती है। इसी अंश को मन्नू भंडारी ‘अकेली’ और ‘क्षय’, अब्बूरी छायादेवी ‘प्रश्नार्थक’ कहानियाँ व्यक्त करती है। मुख्य रूप से पति से दूर रहनेवाली या पति से छोड़ी गयी स्त्री को तो इस समाज जीना हराम कर देती है। किसी पर निर्भर किये बिना वह अपने पैरों पर खड़े होकर, आत्म सम्मान के साथ जीने वाली स्त्री पर यह समाज हमेशा किसी-न-किसी दाग लगाने की तथा नुकसान पहुँचाने की कोशिश करती है। उसके द्वारा की हुई हर कार्य पर, उसकी जिंदगी के हर मामले पर दखलंदाजी करता रहता है। उसकी वृद्धि में हमेशा बाधक बन कर सामने खड़ा होता है।

"प्राकृतिक अनिवार्यता के तहत स्त्री की परिभाषा देह है, जिसका प्राकृतिक उद्देश्य मातृत्व का कर्मकांड, सती और वैधव्य महोत्सव जैसी अन्य अनेक मूल्यान्वित प्रथाएँ मात्र ऐतिहासिक गढ़त है, प्रामाणिक वास्तविकताएँ नहीं।" किंतु

समाज में ऐसी स्त्रियों की संख्या ज्यादा है जो स्त्री शरीर धारण करने के बावजूद पितृसत्तात्मक मूल्यों व मान्यताओं को ही सबसे बड़ा सच मानती है।

इतना ही नहीं दूसरों पर बेहद विश्वास करने से होनेवाले दुष्परिणामों और समस्याओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने से होनेवाले दबलावों को अब्बूरी छायादेवी ने 'प्रयाणम' कहानी में प्रस्तुत किया। आजकल तो दुनिया इतनी बदल गयी, पीढ़ियाँ बदल गयीं, आदमी में भी परिवर्तन आ गया। वह परिवर्तन सकारात्मक नहीं, नकारात्मक रूप धारण कर लिया। आदमी में नैतिक मूल्य इतने गिर गये कि उस पर जरा सा भी विश्वास नहीं कर सकते हैं। इस कहानी में रमा अपनी दोस्त सुधा पर अचंचल विश्वास रखकर खुद को खो बैठती है। अपना प्यार, अपना सर्वस्व, अपना जीवन, आकांक्षाएँ, उम्मीदें, हँसी सब एक साथ खो बैठती है।

## 2.2 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में पारिवारिक अंतर्बोध

पारिवारिक अंतर्बोध के संबंध में चर्चा करने से पहले हमें एक बात की ओर ध्यान देना बहुत जरूरी है कि मन्नू भंडारी की कहानियों में पारिवारिक अंतर्बोध के संदर्भ में कहीं नशाखोरी पति को झाडू मारकर घर से निकालनेवाली आधुनिक तथा प्रगतिशील नारी का चित्रण हुआ तो कहीं पति से हर रोज़ बेवजह मार खाते हुए भी उनकी सम्मान तथा उनसे प्यार जताने वाली नारी का चित्रण हुआ है। कहीं शादी से नफ़रत तथा शादी को उन्नति का बाधक समझने वाली स्त्री का दर्शन होता है और कहीं सब के सब होते हुए अकेली तथा बुरी हालत में जीनेवाली नारी का यथार्थ परक चित्रांकन होता है। कहीं हमेशा मौन रहकर याने हर संदर्भ में तथा हर मामले में मौन रहकर अपनी इच्छाओं को त्यागकर दूसरों की खुशी के लिए समाज से प्रशंसा पाने के लिए अपने मन को धोखा देकर जीवन के हर मोड़ पर समझौता करके जीवन के धरातल पर चलनेवाली नारी का चित्रण मिलता है। अब्बूरी छायादेवी जी की पूरी की पूरी कहानियाँ पारिवारिक परिवेश से किसी-न-किसी रूप से जुड़ी हुई हैं। उनकी कहानियों में ज्यादातर स्त्री पात्र पारिवारिक बंधनों में आते हुए या उन बंधनों में रहते हुए संघर्ष झेलती रहती हैं। लेकिन 'परिवार' नाम की प्रेम से तो

बाहर आना बिल्कुल नहीं चाहती है। कम-से-कम सोचती भी नहीं। परिवार को न चाहने वाले कोई नहीं होते। माता-पिता भी परिवार के सदस्य हैं। इसी तरह भाई, बहन आदि अधिकार पूर्वक रिश्तों के बगैर, ठीक से, स्नेह पूर्वक, परस्पर गौरव तथा समन्वय पर आधारित होना चाहिए। जमीन को छोड़कर □ंग मैदान में संघर्ष करने से क्या सुख? रही हुई स्थिति में ही बढ़ोत्तरी कर लेनी चाहिए। छूट पाने से असली समस्या तो जैसा का तैया ही रह जाता है। स्त्री की स्थिति आजकर छोटी सी खाई से बाहर आकर बड़ी खाई में आकर गिरने के समान है। आजकल की सामाजिक स्थितिगतियों में बदलाव को चाहते तो पारिवारिक संबंधों में भी परिवर्तन होना या लाना होगा। सबसे पहले मनुष्य में परिवर्तन आना होगा। क्रमानुसार पुरुष की दृष्टि में भी परिवर्तन आयेगा। ज्यादातर स्त्रियों की स्थिति ऐसी है, वह पति और बेटे की लड़ाई में उसका मन दोनों की ओर आकृष्ट होगी, एक तरफ मन, एक तरफ न्याय की जाल में फंसकर बेचैन होती है। यह हम प्राचीन परंपराओं और पाश्चात्य संस्कृति की टकराहट मान सकते हैं। अनुशासन के नाम से बड़े लोग, बच्चों को दूर रखने से उनकी दूरी और बढ़ जाने की संभावना है। जीवन में जहाँ तक हो सके संघर्ष को जगह न देने से ही मानसिक शांति मिल सकती है। इच्छाओं की पूर्ति के लिए आज़ादी का रहना अनिवार्य है, संघर्ष से आज़ादी मिलना अनिवार्य है? जैसे सवालों का जवाब पाना अत्यन्त ही आवश्यक है।

इसी मंतव्य को लकर आगे बढ़ती है, अब्बूरी छायादेवी की 'मोग्गु' कहानी और मन्नू भंडारी की 'नशा' कहानी। 30 साल की गृहस्थ धर्म निभाने पर भी पुरुष चाहे तो 3 मिनट में बंधन को तोड़ लेते हैं। अगर पत्नी, पति के समान पढ़ी-लिखी हो तो भी इस मामले में कोई बदलाव  नहीं। इस समाज में दोषी पुरुष होने पर भी उसका गुनेगार का रूप स्त्री को ही हमेशा समझा जा रहा है। अगर स्त्री □हती है तो पति और बेटे के बिना भी जी सकती है। अड़ोस-पड़ोस क्या कहेंगे, क्या यह भय सिर्फ स्त्री को ही है? वही भय पति तथा बेटे को नहीं? हाँ। सच तो यह है कि समाज हर दोष के लिए स्त्री के प्रति ही उँगली उठायेगा। पीढ़ी-दर-पीढ़ी भारतीय संस्कृति

में ढली हुई, पति परमेश्वर की कल्पना से अनुप्राणित है मन्नू की 'नशा' कहानी की आनंदी। बाल विवाह तथा पारंपरिकता से बद्ध नारी को तन-मन पति ही होता है। पिछले 40 वर्षों से इसी जीवन की आदी हो गयी थी। बिना मन की कठपुतली के रूप में मात्र पति की इच्छा को पूरा करने के लिए जीने वाली नारी इन कहानियों की एक अविस्मरणीय पात्र है। पुरुष और स्त्री को पालने में फरक से भी स्त्री का जीवन 'बोनसाय' जैसा बनते जा रहा है। अर्थात् स्त्री को भी कुछ-न-कुछ स्वतंत्रता पुरुष के जैसे दी जाय तो वह दूसरों पर निर्भर रहे बिना, वह खुद के पैरों पर खड़े होने के साथ-साथ दूसरों को सहारा देने तक पहुँच सकती है। तब उसका जीवन भी सार्थक बन जायेगा। अब्बूरी छायादेवी की 'बोनसाय जीवन' कहानी में 'बोनसाय' नारी का प्रतीक है। इस कहानी में तूफान स्त्री की जिंदगी में आनेवाली समस्याओं का प्रतीक है। अगर स्त्री को भी पुरुष के समान देखा जाए तो वह दूसरों को भी सहारा दे सकती है। इतना ही नहीं, वह खुद की उन्नति के साथ-साथ परिवार की तथा समाज की उन्नति के लिए भी बाध्य हो जाती है, क्योंकि परिवार से ही तो समाज की स्थापना होती है।

हर पुरुष की सफलता के पीछे एक स्त्री जरूर रहती है, परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप में। फिर भी स्त्री को तो अपनी भावनाओं को प्रकट करने की आज़ादी पुरुष नहीं दे रहा है। ठीक इसी हालत में गुजरती है अब्बूरी छायादेवी की 'आयना कीर्ति वेनुका' कहानी की सीतम्मा। लेकिन ठीक इसके विपरीत पुरुष की जिंदगी बरबाद होने के पीछे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से स्त्री मौजूद है। ऐसी महामात्यों की वजह से पूरी स्त्री जाति का नाम बदनाम हो रहा है। इसका उदाहरण मन्नू भंडारी की 'कील और कसक' कहानी की 'रानी' है। पति से तिरस्कृत रानी की व्यथा और उदास लालसाएँ विकृतियों को जन्म देकर वैचारिक पतन व चारित्रिक पतन का कारण बनती है, वह वस्तुतः एक बड़ी समस्या है। पारिवारिक समस्याएँ पति-पत्नी के समझने की कमी की वजह से अधिकांश उत्पन्न होते हैं। इस संदर्भ में हम मन्नू भंडारी की 'नकली हीरे' कहानी को ले सकते हैं। धन ही जिंदगी नहीं, जीने के लिए धन की जरूरत तो

है, लेकिन उससे पहले अच्छे व्यक्तित्व का भी होना जरूरी है। यही लक्षण सारे जीव जाति में से मानव को उच्च स्थान प्राप्त कराने में गतिमान है। जब पैसों की लालच में पड़कर अपने व्यक्तित्व को खो बैठते हैं तब उसकी और उसके परिवार वालों की जिंदगी बरबाद हो जाती है।

नारी जितनी भी आधुनिक क्यों न हो, हर दूसरी लड़की अपने पति के साथ वैवाहिक जीवन बिताना चाहती है और यही यथार्थ है। स्त्री हो या पुरुष हो इस समाज में अकेला जी नहीं सकता। अगर वह अकेला रहने के लिए कटिबद्ध होने पर भी यह समाज उन्हें जीने नहीं देता। मानव संवेदनशील प्राणी है, उनकी अपनी-अपनी भावनाएँ और संवेदनाएँ होती हैं। इसके साथ-साथ वह अपनी भावनाओं, संवेदनाओं तथा विचारों को व्यक्त किये बिना मूक या पत्थर जैसा नहीं रह सकता। इसीलिए पारिवारिक व्यवस्था में समाज का महत्वपूर्ण स्थान है। बचपन में माता-पिता, यौवन में पति या पत्नी, बुढ़ापे में बच्चों का सहारा चाहिए। मन्नू भंडारी की 'जीती बाजी का हार' कहानी की नायिका 'मुरली' जिंदगी भर अकेला जीने के लिए कटिबद्ध हुई एक अविवाहित नारी है। ज्यादातर ऐसी स्त्रियाँ अपनी अंदर की मानसिक कुंठा को छिपाकर जीवन बिताने की चेष्टा करती हैं। यह कहानी मातृत्व के अभाव में नारी के दुरूह जीवन की ओर संकेत करती है। इस तरह कुछ स्त्रियाँ नौकरी करते-करते अकेले जीने में खुश होती है तो अब्बूरी छायादेवी की कहानी 'श्रीमती उद्योगिनी' कहानी की नायिका विवाहित होकर पूरी सफलता के साथ घर संभालते हुए, नौकरी करने में सफल होती है। ज्यादातर स्त्रियाँ नौकरी इसलिए कर रही हैं कि परिवार की आर्थिक भार को कम करने के लिए। इस बात को परिवार सदस्य जानते हुए भी उसका साथ देने के लिए तैयार नहीं, लेकिन उनकी कमाए पैसे लेने के लिए तो हमेशा तैयार है। इन द्वंद्व दायित्वों को निभाना, यह बात सुनने के लिए आसान सा लगता है। लेकिन स्त्रियाँ इन दायित्वों को निभाते हुए तनाव ग्रस्त हो रही है। इस समस्या का मूल कारण परिवार सदस्यों के बीच अपनापन और समझ की कमी। ज्यादातर परिवारों में बहू को परायी मानते हैं एवं उधर मायके वाले भी

उसे परायी मानते चले आ रहे हैं। तब उसे अपना समझने वाला कोई नहीं रहेगा न इधर पति ठीक से समझता न बाकी परिवार सदस्य। एक दूसरे को अच्छे समझने से ये मामला आसानी से सुलझ पायेगी। अगर ऐसा नहीं तो परिवार विघटित होने की संभावना है। सुख में साथ देना कोई बड़ी बात नहीं, लेकिन हर एक समस्या के मोड़ पर अपनों का साथदेना फर्ज बनता है। तभी रिश्ता हमेशा के लिए कायम होता है। ये सारे अंश अब्बूरी छायादेवी की 'श्रीमती उद्योगिनी' कहानी में देखने को मिलता है। नौकरी करने पर भी स्त्री की स्थिति नहीं बदल रही है। छोटे-मोटे विषयों को लेकर पति-पत्नी में झगड़े तो होते रहते हैं, लेकिन तीसरे आदमी उन दोनों के बीच प्रवेश कर झगड़े को शांत करना चाहना मूर्खता है। गृहस्थी को आनंदमय बनाना है तो थोड़ा सा 'सेन्स आफ ह्यूमर' को अपनाना चाहिए। पति के प्रति पत्नी को प्यार और गौरव तथा पत्नी के प्रति पति को प्यार और अधिकार होना अनादिकाल से लेकर आज तक साधारण विषय बन गयी है। लेकिन यह अधिकार की भावना ही दोनों चाहे नौकरी कर रहे हों या  नहीं स्पर्धा को पैदा करती है। दोनों को यह समझना तो जरूरी है, वैवाहिक बंधन को हमेशा के लिए बनाए रखने के लिए, एक दूसरे के प्रति अधिकार और अहंकार को त्यागना चाहिए। इतना ही नहीं हरेक को आत्म परिशीलन करना जरूरी है, तभी हम सुधर सकते हैं तथा सुधार भी सकते हैं।

स्त्री बचपन से लेकर मृत्यु तक किसी-न-किसी रूप में अर्थात् बचपन से माता-पिता का, विवाह के बाद पति का, बुढ़ापे में बच्चों का साथ देती हुई अनुसरण करती रहती है। सब की सोच साथ देने में ही मतलब है। लेकिन उनके अनुसरण करने साथ-साथ अंधेरा भी महसूस करती है। इसका मतलब है वह उन सभी के सहारे के बावजूद भी अकेलापन महसूस करती है। इधर वह व्यक्त करती नहीं और उधर परिवार सदस्य समझते नहं। बुढ़ापे में जीविका चलाने के लिए पैसों की □रूरत तो होती रहती है। जब वर्धनम्मा के पति मरने के पहले वर्धनम्मा के नाम पर मकान लिखवा कर अब्बूरी छायादेवी ने इस 'अपना रास्ता' कहानी के माध्यम से एक ऐसे घिनौने यथार्थ को हमारे सामने प्रस्तुत किया है कि स्त्री किसी-न-किसी के सहारे

के बिना जिंदगी गुजार नहीं सकती। चाहे वह पिता हो, भाई हो या पति हो। स्त्री अकेले जीने के लिए घर की बहुत जरूरत है, ताकि वह किसी पर निर्भर किये बिना खुद के विचारों का सम्मान करते हुए जी सकती है। मनुष्य पानी, रोटी और हवा के बिना भी थोड़े पल के लिए जी सकता है, लेकिन धैर्य के बिना एक पल भी नहीं जी सकता है। □ब स्त्री कम-से-कम अपने परिवार के सदस्यों पर निर्भर हुए बिना अकेले जीने के लिए तैयार हो जाती है तब उसमें धैर्य अपने-आप आ जाता है। साथ-ही-साथ उसमें आत्म निर्भरता भी अपने आप बढ़ जाएगा।

घर संभालना, परिवार के सभी लोगों का ख्याल रखना तो अच्छी बात है, लेकिन हमारा व्यक्तित्व दूसरों पर हावी करके नुकसान पहुँचाना ठीक नहीं है। □ब यही नियम, पाबंदी जिस परिवार में अधिक होती है, तब वह घर नहीं मकान कहलाता है। इससे जिंदगी यांत्रिक बन जाती है। इतना ही नहीं परिवार के सदस्यों की इच्छाएँ, स्वतंत्रता, भावनाएँ, स्नेह, प्रेम सब हरण की जाती है। इसलिए हर चीज़ की हद होनी चाहिए, चाहे वह नियम हो, स्नेह हो, या प्रेम हद से ज्यादा होने से मीठेपन से ज्यादा कडुवा लगता है। इसी तरह मन्नू भंडारी की कहानी 'सयानी बुआ' की नायिका 'सयानी' को घर संभालने में बेहद इच्छा है तो अब्बूरी छायादेवी की कहानी 'सुकांत' की नायिका घर के बेहद काम से व्याकुल होकर वह अपने बुढ़ापे में आत्महत्या करके शाश्वत नींद में जाती है। यंत्र की भांति लगातार काम करनेवाली स्त्री की मनोवेदना वर्णनातीत है। प्रत्येक जमाना किसी-न-किसी समस्या से पीड़ित है। बचपन से लेकर शादी के पहले तक माता-पिता की आज्ञा का पालन करना, शादी के बाद पति की सेवा करना, घर संभालना, बाद में बच्चे, फिर उनकी देखभाल, इनके साथ-साथ पति की आज्ञा का पालन करना यही स्त्री की दिनचर्या बनती जा रही है। स्त्री इन सभी दायित्वों को अपनाते-निभाते इतनी व्यस्त हो रही है कि आराम से सो ही नहीं पाती।

बुढ़ापे में आत्मीयता तथा अपनों के सहारे की जरूरत होती है। लेकिन बदलते जीवन विधान, नगरीकरण आदि ने बुढ़ापे में बड़ों को अपने बच्चों से दूर

कर दिया है। इसी वज़ह से बूढ़े लोग सभी के बीच होते हुए भी वे अकेलापन महसूस कर रहे हैं। ये अकेलापन उन्हें पल-पल मानसिक रूप से तथा शारीरिक रूप से निचोड़ रहा है। गाँव में बुढ़ापे को गजारने में, शहर में गुजारने में बहुत फर्क है। अब्बूरी छायादेवी के 'उडरोज़' कहानी में उडरोज़ बुढ़ापे का प्रतीक है तो ताज़े गुलाब यौवन का प्रतीक है। बच्चों को तो रिश्ता तोड़ना आसान सा लगता है। लेकिन माँ ऐसा कभी नहीं कर पायेगी। क्योंकि माँ को तो रिश्ता जोड़ना ही मालूम है, तोड़ना नहीं।

पति-पत्नी के बीच आत्मीयता की कमी के कारण, उन्हें जिंदगी भर समझौता करके यंत्रवत जीवन बिताना पड़ रहा है। ठीक इसी यथार्थ को प्रस्तुत करती है अब्बूरी छायादेवी की 'उपग्रह' कहानी। स्त्रियों के लिए सेन्स आफ बोरडम एक नित्य समस्या है। अनेक पुरुष इस स्थिति को और इसमें होनेवाली छोटी-मोटी इच्छाओं को समझ नहीं पाते। पुरुष के चारों ओर, उसकी दया के लिए उपग्रह की तरह फिरनेवाली स्त्रियाँ अपनी गति को नहीं बदलती तो उनका जीवन हमेशा के लिए कांतिहीन बन जाने की संभावना है।

कई परिवारों में तो पिता के समीप में बैठना ही बेटी की बाल्य स्मृति के रूप में ही बची रहती है। बच्चों को पालने में तीव्र अनुशासन तथा लड़कियों के प्रति भेद अपनाने से माता-पिता अपनी बेटियों से मानसिक रूप से बहुत दूर होते जा रहे हैं। अब्बूरी छायादेवी द्वारा लिखित 'स्पर्श' कहानी पिता और पति के रूप में पुरुष की अधिकार भावना का प्रतीक है। इसी भावना के कारण रिश्तों में अपनापन तथा स्नेह पूर्ण वातावरण कमजोर हो रहा है। स्त्री ज्यादातर अंतर्मन में तो परिस्थितियों से विद्रोह करती है, किंतु यथार्थ में कार्यान्वित करते समय कमजोर पड़ती है। प्रकट विद्रोह में असमर्थ सिद्ध होती है। लोग अच्छा कहें, इस भावना से मन्नू भंडारी की 'एक कमजोर लड़की' कहानी की नायिका 'रूप' अपनी इच्छाओं का होम करने की प्रवृत्ति रखती है। सामाजिक तिरस्कार सह न पाना उसकी एक बड़ी कमजोरी है। लादे हुए निर्णयों के कारण मानसिक कमजोरी और स्वनिर्णय की अक्षमता का प्रतीक

है नारी। जिसने अनेक प्रकार से निर्णय लेने का प्रयास किया, पर जो हर बार हारती गई। वह प्रेम जैसे अंतर्मन के व्यवहार में भी आत्मनिर्भर नहीं बन पायी है। आखिर में आकर प्रेम से ज्यादा गृहस्थी को टूटने से बचाना ही बंधन का धर्म समझती है।

## 2.3 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में मनोवैज्ञानिक अंतर्बोध

मनोवैज्ञानिक अंतर्बोध का साधारण अर्थ है-"मानसिक रूप से किसी भी वास्तविक ढांचे को खोज निकालना।" अगर कहानीकार को मनुष्य के कार्यों का तद्भव चित्र उतारना चाहेगा तो उसके कार्य व्यापारों की भाँति ही उसे अपने विचारों का भी लेखा-जोखा लेना ही पड़ेगा। कहानीकार को बाध्य होकर जनता की मनःस्थिति से भी संबंध रखना पड़ता है। मानव क्रियाशील जीवन ही संपूर्ण जीवन नहीं।

स्थूल रूप से मनोवैज्ञानिक अंतर्बोध, सामाजिक अंतर्बोध के विपरीत मनुष्य की वैचारिक चेतना की विवृत्ति हुआ करता है। वह उसके विपरीत समिष्टिगत महत्व और मूल्यों को अस्वीकारता नहीं है, फिर भी वह बाह्य सत्ता का विश्लेषण करने के स्थान पर उसके चेतन, अचेतन तथा अवचेतन मन के रहस्यों को उद्घाटित करता है।

एक दूसरे की मानसिकता में अंतर होना स्वाभाविक है, इसलिए तो एक विषय एक के लिए संतोष का बाद्य होता है तो वही दूसरे के लिए तंग का बाद्य होता है। इसलिए तो किसी दोनों के विचार तथा व्यवहार में पूरी तरह ताल-मेल पाना संभव नहीं। मन्नू भंडारी अपनी 'सयानी बुआ' और अब्बूरी छायादेवी की 'सुकांत' कहानी में ठीक इसी वैरुद्य को प्रस्तुत करती हैं। मन्नू भंडारी की 'सयानी बुआ' कहानी की नायिका 'सयानी' बेहद घर का काम करके खुद ही नहीं सभी घरवालों को यंत्रवत जीने के लिए मजबूर कर देती है तो अब्बूरी छायादेवी की 'सुकांत' कहानी की नायिका घर की बेहद काम को नरक समझकर, आखिर उस नरक से मुक्त होने के लिए मृत्यु शय्या पर चली जाती है।

पागलपन की सीमा तक व्यवस्था और समय की पाबंदी मनुष्य को मनुष्य नहीं मशीन बना देती है। मानो रोबोट हो जो समय से काम करे। कुछ घरों में व्यवस्था के नाम पर सभी सदस्यों को कैदी के समान रहना पड़ता है तो कुछ घरों में बहू के ऊपर सभी परिवार सदस्य घर के काम के बहाने जुल्म चला कर खुद स्त्री होते हुए भी दूसरी स्त्री के जीवन को नरक बना रहे हैं। उपर्युक्त दो संदर्भों में एक की वजह से अन्य परिवार सदस्यों को तकलीफ हो रही है तो दूसरे संदर्भ में एक औरत को परिवार के सभी सदस्यों की वजह से तकलीफ ही नहीं यही समस्या कहीं-कहीं जीवन्मरण समस्या बनकर भी सामने आ रही है। इस दुनिया में बिलकुल मूल्य रहित समझी जानेवाली चीज़ है औरतों के खुद का समय। स्त्रियों को तो अपने लिए समय नहीं रहता। आदमी के प्राथमिक जरूरतें जैसे रोटी, नींद के विषय में भी स्त्रियों को अपना अपने लिए नहीं रहता। घर में बड़ों से लेकर बच्चों तक सब की जरूरतों को पूरा करने के बाद ही स्त्री अपनी जरूरतों के बारे में सोचती है।

नये वर-वधू के बीच आत्मीय भावना की कमी के कारण दोनों एक दूसरे को समझने की बजाय समझौता करने लगते हैं। इसी विषय को अब्बूरी छायादेवी ने 'उपग्रह-1' कहानी में प्रस्तुत किया है। आजकल के यांत्रिक रिश्तों का यथार्थ है- सुबह से शाम तक घर का काम करना, खाना, सोना, पति की सेवा करना, उनकी हर इच्छा को पूरा करना यही स्त्री की दिनचर्या है। इन सब के बीच पति खुश है, लेकिन पत्नी तो पति से आत्मीयता, तारीफ, प्रेम, स्नेह आदि न पा सकने के कारण असंतुष्ट जीवन बिता रही है। इसी कमी के कारण वह अकेलापन महसूस कर रही है। स्त्री पति की खुशी के लिए अपनी छोटी-मोटी इच्छाओं को भी दूर करती जा रही है। वह पति की हर इच्छा को पूरा करने के लिए हमेशा छोटी-छोटी सी बात को भी इन्कार कर देती है। यह कहना ठीक होगा कि स्त्री सुबह से लेकर रात तक पति के चारों ओर उपग्रह की तरह घूमती रही है।

अकेलापन व्यक्ति को निरीह और हताश बनाकर उसे तोड़ने पर तुल जाता है। सभी-के-सभी अपने से दूर होने पर अकेले जीने में दर्द महसूस करते हैं तो

इससे बढ़कर और हृदय विदारक स्थिति है कि सब के होते हुए भी अर्थात् सब साथ-साथ होने पर भी अकेलापन महसूस होना। मन्नू भंडारी ने 'अकेली' कहानी और अब्बूरी छायादेवी की 'उडरोज़' कहानी में इसी मनहूस और यथार्थपरक चित्रण को प्रस्तुत किया है। कहानयिों को इस तरह चित्रित किया गया है कि जैसा जैसे पाठक उसे पढ़ता चलता है वह अपने को अकेलेपन की गहराइयों में उतरते पाता है। वह महसूस करने लगता है कि चारों ओर से एक मनहूस उदासी और अपनेपन के बीच एक तीव्र उपेक्षा बोध उसे घेरता जाता है। यहीं आकर कहानी अपनी सीमाओं को लाँघकर एक व्यापक मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य से जुड़ जाती है।

जब बच्चे बचपन में अपने छोटे-छोटे पैरों से माता-पिता की छाती पर लात मारते हैं तो वे हँस लेते हैं लेकिन वही बेटा या बेटी बड़े होकर अपने व्यवहार से दिल को चोट पहुँचाने से उस दर्द को सहना उनके लिए नामुमकिन है। बच्चो ंको पाल-पोस कर बड़ा करने के साथ-साथ ही बच्चों के प्रति माता-पिता अपनी उम्मीदों को भी दिन-ब-दिन बढ़ा लेते हैं। लेकिन जब वृद्धावस्था में माता-पिता के प्रति बच्चे अपने उत्तरदायित्वों को भूल जाते हैं तो माता-पिता का दिल टूटकर चकनाचूर हो □ाता है। नगरीकरण के प्रभाव से गाँवों में आज पुरानी एवं नयी पीढ़ि का एक शीत युद्ध प्रारंभ हो गया है। साथ ही आज महानगरों में औद्योगीकरण के नाम पर आदमी दिन-रात व्यस्त है। अपनी जरूरतों को पूरा करने में ही बुरी तरह समय से लगा रहता है ऐसे में न वह अपने स्वास्थ्य का ध्यान रख पाता है और न ही अपने पर आश्रित माता-पिता की चिंता कर पाता है। इस तरह औद्योगीकरण के जरिए आत्मीय भावनाएँ संकुचित होती जा रही हैं। ये भावनाएँ इतनी संकुचित हो रही हैं कि इसी वजह से अनेक परिवार विघटित भी हो रहे हैं। लेकिन हमारे भारत जैसे सांप्रदायिक देश के लिए यह ठीक नहीं है। इतना ही नहीं पुराने जमने से ही हमारे देश को 'वसुदैवकुटुंबकम' कहते आ रहे हैं। अगर हम लोग इसी तरह यंत्र की भांति जीने लगेंगे तो हमारे देश की ख्याति, अपख्याति के रूप में बदल जाएगी। जब हम अपनों के साथ जिंदगी गुजारने लगते हैं तब उसका महत्व हमें पता नहीं

लता, लेकिन जब हमारे कार्यों द्वारा अपनों को दूर कर लेते हैं तब हमें उनकी महत्ता की ग्लानि होती है। तब ग्लानि होने पर भी कोई फायदा नहीं, ये ग्लानि हमें रिश्तों को कायम रखने में तथा रिश्तों को तोड़ने के पहले होती तो अपनों से अटूट बंधन में बांधने की संभावना है।

ठीक इसी तरह अपने दायित्व तथा धर्म को भूलकर सिर्फ अपने लिए सोचनेवाले स्वार्थवान पुरुष ही नहीं, बिलकुल ठीक इसी तरह स्वार्थी होकर अपने फर्ज को भूलनेवाली स्त्रियाँ भी देखने को मिलती हैं, उन्हीं में एक है मन्नू भंडारी की कहानी 'कील और कसक' की नायिका 'रानी'। आजकल हकीकत में कहीं-कहीं हमें ऐसी स्त्रियाँ भी हमें देखने को मिलती है, जो पति की उपेक्षा के कारण कहीं और आकर्षित होती है। लेकिन जब उस पुरुष से भी इच्छित योग प्राप्त नहीं होता तब वह हताश या आक्रांत होकर आक्रोश करती है। साथ ही वेदना भरी कसक उसके जीवन का अंग बन जाती है। इस समाज में सीता जी जैसी महान पतिव्रता नारियाँ हैं साथ ही रानी जैसी भी। पहले जमाने में तो नारी को भगवान का प्रतिरूप माना जाता था। भारतीय समाज में नारी के दोहरे मानदंड प्राचीन काल से विद्यमान हैं। एक ओर तो वैदिक साहित्य में यह लिखा हुआ है कि "यत्र पूज्यंते नार्यस्तु, तत्र पूज्यंते देवता" तो दूसरी ओर रामचरित मानस में तुलसी लिखते हैं कि ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी ये सब ताडन के अधिकारी हैं। एक ओर सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा, काली, वैष्णवी, कात्यायनी, कूशमांडा जैसे शब्द हिंदू संस्कृति में मौजूद हैं। दूसरी ओर कुंती और द्रौपदी को उतना सम्मान नहीं मिलने का कारण होता है नैतिकता का पतन। लालच में पड़कर नैतिक मूल्यों को खोकर अपनों की दृष्टि में खुद को गिरा रहे हैं। लेकिन बाद में पछताकर, पूर्ण रूप से ही मार्ग पर चलने पर धोखा खाया हुआ व्यक्ति कभी यकीन नहीं करेगा। कोई यकीन करे या न करे हर मोड़ पर, किसी भ्ज्ञभ हालत में भी अपनी करनी, कहनी तथा सोच में भी गलती नहीं होनी चाहिए। हर दिन को हम एक पाठ के रूप में लेकर आगे बढ़ना चाहिए और खुद को धोखा किये बिना आगे बढ़ना जरूरी है। ज्यादा प्रतिशत लोग चाहे पढ़े-लिखे हों या अनपढ़ हों

यही सोचकर चलते हैं कि अगर उनके साथ कुछ अच्छा हुआ या कोई सफलता प्राप्त हुई तो वे जरूर यह कहेंगे कि उस सफता के पीछे उनकी कड़ी मेहनत है, लेकिन ठीक इसके विपरीत उनके साथ कुछ बुरा हुआ तो उसका प्रमुख कारण उनकी लापरवाही, लालच आदि होगा। लेकिन हकीकत में वे उस संदर्भ को इस तरह प्रकट करेंगे कि मेरे भाग्य में यही लिखा हुआ है, और भगवान के ऊपर ही सब छोड़ देते हैं। लेकिन यह हरगिज़ नहीं मान पाते कि उनके साथ जो भी हुआ है या हो रहा है उसके लिए खुद ही जिम्मेदार हैं। अर्थात् उसकी मन, विचार, कहीन तथा करनी आदि। साथ ही यह भी सोचना है कि उस असफलता या गलती में खुद की जिम्मेदारी कितनी है और गलती दुबारा न होने के लिए उसे किस तरह सतर्क रहना है। अगर हर इनसान अपनी गलती का एहसास करके सुधरना तो अच्छे परिणाम का सूचक है। और एक बात की ओर ध्यान देना कि उसे जरूर इस रास्ते में गुजरना बहुत मुश्किल है। लेकिन सच्चाई का रास्ता पहले कडुवा लगने पर भी उसका अंतिम फल तो जरूर मीठा ही होगा। यह ज्वलंत सत्य है क्योंकि समाज बुराई को जल्दी स्वीकार करती है तथा पहचानती भी है। लेकिन सच्चाई की पहचान के लिए वक्त तो ज्यादा ही लगेगा, इसलिए हमें सब्र से रहना बहुत जरूरी है।

यों आदर्शों का अपना स्वाभिमान होता है। आस्था होती है। एक दृढ़ संकल्प शक्ति होती है उसमें। वह सहज में हार नहीं मानता है। ठीक इसी आस्था को लेकर चलनेवाली आदर्श एवं स्वाभिमानी उद्योगिनी स्त्रियाँ हैं मन्नू भंडारी की ‘क्षय’ की कुंति तथा अब्बूरी छायादेवी की ‘श्रीमती उद्योगिनी’ कहानी की नायिका। हर एक नारी के लिए घर का काम संभालने के साथ-साथ नौकरी को भी संभालना एक बड़ी चुनौती है। इस चुनौती के सिलसिले में नारी को परिवार तथा समाज की तरफ से अनेक समस्याओं को झेलते हुए बुरी तरह से तनाव ग्रस्त होना पड़ रहा है। स्त्री को इस मामले में कम से कम परिवार के सदस्यों के साथ समझौता हो पायेगी तो नारी को अपनी चुनौती में सफलता का रास्ता सुगम हो जायेगा। साधारणतः अविवाहित स्त्रियों के लिए तो परिवार सदस्यों की तरफ से सहायता प्राप्त होती है। लेकिन

ज्यादातर विवाहित स्त्रियों के लिए नौकरी के मामले में परिवार के सदस्यों से सहायता मिलना बहुत मुश्किल है, साथ ही वे लोग नौकरी करने के लिए उसे मजबूर कर देते हैं। तब उसकी आत्म संघर्ष तो अनिर्वचनीय बन जाती है। दूसरी ओर स्त्री चाहे विवाहित हो या अविवाहित हो तथा घरेलू हो या उद्योगिनी हो हर पल समाज परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से उनकी निजी मामले में दुखल अंदाज करते हुए, समस्याओं को उत्पन्न करते हुए उनके रास्ते में काँटे बिछा रही है। इन कांटों के कारण पति और पत्नी के बीच शंका तथा मन मुटाव आदि पैदा हो रहे हैं। चाहे वे पति-पत्नी हों, पढ़े-लिखे हों, विवेकशील हों चाहे उन दोनों के बीच अच्छा समझौता क्यों न हो फिर भी ये लोग उन कांटों के शिकार बनते जा रहे हैं। कहीं-कहीं यह स्थिति इतनी तीव्र है कि बाल-बच्चों के होते हुए भी वे तलाक लेकर खुद के हाथों से परिवार विघटित कर ले रहे हैं। इस वजह से बच्चे माता-पिता के होते हुए भी अनाथ बन रहे हैं। मासूम बच्चों की इस हालत का जिम्मेदार समाज तथा परिवार ही है।

बच्चो ंका नाम लेते ही कोमलता का भाव मन में आ जाता है। जब उस मासूम दिल को चोट पहुँचती है, बच्चों को पालने में तीव्र अनुशासन और लड़कियों के प्रति भेद दिखाने से माता-पिता और बच्चों के बीच दूरी ज्यादा होकर आत्मीय मिलन की जरूरत होने पर वह दूरी मानसिक तनाव पैदा करती है। इसका प्रमाण ही अब्बूरी छायादेवी की 'स्पर्श' तथा मन्नू भंडारी की 'सज़ा' कहानी है।

ज्यादातर हम दो तरह के स्वभाव वाले बच्चों के स्वभाव तथा चिंतन उनके आयु के हिसाब से सीमित रह जाता है तो कुछ बच्चों के स्वभाव तथा चिंतन उनके आयु के हिसाब से सीमित रह जाता है तो कुछ बच्चों का स्वभाव तथा चिंतन बालातीत होता है। ऐसे बच्चे परिस्थितियों के हिसाब से खुद को पूरी जिम्मेदारी के साथ मोड़ लेते हैं तथा अपने परिवार की हालत को समझते हुए अपने माता-पिता के लिए बाधक बनने के बगैर अपनी ओर से जितनी सहायता हो सके उतनी सहायता देकर अपना कर्तव्य निभाते हैं। ठीक ऐसी ही समझदार लड़की है 'सजा' कहानी की

'आशा'। लेकिन इसके विपरीत कुछ बच्चे कभी-कभी माता-पिता को ठीक से समझे बिना डर के मारे घर से भाग कर खुद ही समस्याओं को पैदा कर लेते हैं यामाता-पिता की हर बात के लिए हमेशा डर कर मानसिक रूप से दब जाते हैं। ठीक इसी हालत में गुजरते हुए, जब पापा को उनकी आत्मीयता की जरूरत पड़ने पर निःसहाय बन जाती है 'स्पर्श' कहानी में बेटी। ज्यादातर लड़की को पराई समझने के कारण, उसकी भावनाओं को नकारते जा रहे हैं। बेटे को ही वंशोद्धारक और पुन्नाम नरक से बचाने वाला मानते रहे हैं। माता-पिता बच्चों को पालने में लिंग भेद दिखाने के कारण उनकी उन्नति तथा मानसिकता में तीव्र भिन्नताएँ आ जाती हैं। अगर यह स्थिति ऐसे ही चलती रहेगी तो जिन माता-पिता ने बेटी का परिचय इस दुनिया से करवाया है, उन्हीं की मूढ़ता तथा अनुशासन से बच्चों की कोमल भावनाएँ सिकुड़ जाती हैं। कहीं-कहीं कुछ परिवार को देखकर हमारे मन में आधुनिक न्याय को लेकर कई प्रश्न उठ खड़े होना स्वाभाविक है। यदि निष्ठा और ईमानदारी पूर्वक एक मूल्यवान जिंदगी जीने का यही परिणाम है तो व्यक्ति इन से क्यों चिपका हुआ है, क्यों अपनी भावी पीढ़ी के अर्थात् बच्चों के भविष्य को खराब करे। अपनों में पराया करार किया जाकर जीने की यंत्रणा किसी कदर कम असह्य नहीं होती है। पाँच साल के बाद कर्ज में डूबा हुआ, हाथ से नौकरी खोया हुआ, संवेदनाओं से शून्य, अपने-परायों के संदेहों से और लांछनाओं से घिरा हुआ यह 'पाप' नाम का व्यक्ति जेल से रिहा होकर भी बिना किसी 'रिएक्शन' के चेतनाहीन, खोया-खोया अपरिचित सा बन जाता है। उस आदमी के बच्चे तथा बाकी परिवार वालों की हालत तो कह भी नहीं सकते। क्योंकि वे लोग मानसिक रूप से वंछित हैं। हमारी इस न्याय पद्धति से अभिशप्त यह व्यक्ति हमेशा के लिए मर जाता है। ऐसी हालत में गुजरनेवाले व्यक्ति अगर जेल से रिहा होने पर आधुनिक न्याय के प्रति वह यकीन ही नहीं कर पायेगा। भ्रष्ट व्यवस्था और तंत्र की मार व्यक्ति और समाज को किस तरह निष्प्राण और संज्ञा-शून्य बनाती जा रही है। इन तमाम परिस्थितियों से अभिन्न है मन्नू भंडारी की 'सज़ा' कहानी।

## 2.4 मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में राजनैतिक अंतर्बोध

मन्नू जिन दिनों कहानियाँ लिखती रही हैं उन दिनों में राजनीति का प्रभाव सामाजिक और व्यक्ति जीवन पर अधिकाधिक होता रहा है, इसलिए उनकी कहानियाँ राजनैतिक ढांचे को लेकर आगे बढ़ती हैं। मन्नू की 'मैं हार गई' कहानी तथा 'महाभोज' उपन्यास राजनीति से अधिक प्रभावित है। 'मैं हार गई' कहानी समकालीन नेताओं पर जबरदस्त व्यंग्य है। सुरा और सुंदरी का उपभोग करके नैतिक उपदेश देनेवाले नेता चरित्र की दृष्टि से कितने पवित्र हैं उसकी ओर एक संकेत इस कहानी में मिलता है। लेखिका ने स्वीकार किया कि आज का नेता सुरा-सुंदरी का सेवन करता है। वह भ्रष्ट है और गीता का उपदेश देता रहता है। आज तो कुर्सी और सत्ता की मंजिल तक पहुँचना है, चाहे जिस रास्ते से पहुँचे।

'मैं हार गई' कहानी में नायिका ने समाज के दो भिन्न वर्गों से दो भावी आदर्श नेता निर्ताण के कार्य में असफल होकर निर्देश किया है कि हमारे आधुनिक सामाजिक संदर्भों में किसी आदर्शवाद को लेकर चलना कदापि संभव नहीं है। यथार्थ हमारे जीवन के साथ इतनी गहराई से जुड़ गया है कि हम उसकी उपेक्षा करके नहीं रह सकते। इसलिए एक आदर्श नेता के चरित्र को गढ़ने में कहानी की नायिका हार जाती है। स्पष्ट है कि उस हार में यह स्वीकृति है कि वर्तमान नेताओं में सभी तरह की बुराइयाँ भरी पड़ी हैं। ये नेता भ्रष्टाचारी, दुराचारी और दुर्व्यसनों में घुल-मिल गये हैं।

जरा सा भी मौके को इस्तेमाल करने वाले व्यापार दृष्टिवालों के लिए युद्ध भी अच्छे मौके हैं। आजकल की सामाजिक और आर्थिक स्थितियाँ इतनी बदल गयी हैं कि पैसे कमाने का जरा सा भी मौके का इस्तेमान करने पर लोग तुले हैं। लेकिन गरीब आदमी तो वहीं के वहीं हैं। उनकी स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया। सिर्फ अमीर लोग ही दिन-ब-दिन अमीर होते जा रहे हैं और मकान पर मकान बनाते जा रहे हैं। इन तमाम परिस्थितियों को अब्बूरी छायादेवी ने 'मौका' कहानी में दर्शाया है। कर्फ्यू के समय में पैसे कमाने की लालच में हर इनसान की दृष्टि बदल जाती है,

उस समय सामान्य मानव की हालत, गरीबी रेखा के निचले लोगों की हालत तो और बिगड़ जाती है।

इतना ही नहीं आजकल जमाना इतना बदल गया है कि चाहे कुछ भी हो उन लोगों की यही चाहत है कि सिर्फ पैसे कमाना है। इसके साथ-साथ आदमी पैसों के लालच में पड़कर नैतिक मूल्यों को खोकर अपनों की दृष्टि में खुद को गिरा रहा है।

मृत्यु को रोकना कठिनतर कार्य है, फिर भी इनसान में जीने की चाहत छूटती नहीं। मानव को दैव के प्रति अनन्य भक्ति है साथ ही आधुनिक चिकित्सा के साधनों के प्रति आराधना भी। ऐसी चाहत पैदा होती है कि मृत्यु को कुछ समय तक रोक नहीं सकते? कम से कम 5 साल या 10 साल से अधिकतर जीवन को नहीं खरीद सकते? इसी चाहत को लेकर अब्बूरी छायादेवी के 'अंत के पाँच नक्षत्र' कहानी के माधव राव सबसे बड़ी एवं मशहूर अस्पताल में दाखिल हुए। सच कहें तो मृत्यु को खरीदने के लिए उनका दूर प्रयास कर जाने की जरूरत नहीं। क्योंकि उसके (मृत्यु) के आगमन में अनिश्चित है। समाज में चिकित्सक को दैव के समान महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि चिकित्सक प्राणों की रक्षा करता है। लेकिन आजकल कुछ चिकित्सक गण और नेता गण भक्षक बन कर 5 नक्षत्र वाले अस्पताल के नाम हैटेक शोषण कर रहे हैं। चाहे कारपोरेट या सरकारी अस्पताल हो, आजकल एक व्यापारिक धंधा चलाने में मशहूर हो गये हैं। वे अपने नैतिक मूल्यों को खोकर राक्षस जैसे खून चूस रहे हैं। इस कहानी में डॉक्टर वर्ग और अस्पताल के संस्थापकगण पूंजी वर्ग का प्रतीक है तो उनके द्वारा ग्रस्त हुए लोग माधवराव, करुणा, अनुपमा आदि मध्यवर्ग के प्रतीक हैं। अनादि काल से लेकर पूँजीवर्ग का काम यही है कि मध्यवर्गियों का शोषण करना एवं उनके जीवन को प्रश्नार्थक बनाना।

* * *

# अध्याय-III

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ

3.1 सामाजिक यथार्थ

3.2 व्यक्तित्व का महत्व

3.2.1 बंधन

3.2.2 आदर्श

3.2.3 पुनर्विचार

3.3 भेद-भाव

3.3.1 लिंग-भेद

3.3.2 लालित्य

3.4 मानसिक संघर्ष

3.4.1 द्वंद्व

3.4.2 अकेलापन

3.4.3 सज़ा

3.4.4 बुढ़ापा

3.4.5 बचपन

3.5 मध्यवर्गीय जीवन

3.5.1 पिछड़ापन

3.5.2 अध्यापक

3.5.3 व्यापार

3.5.4 न्याय

3.5.5 राजनीति

3.6 आर्थिक समस्या

3.6.1 हैटेक शोषण

3.6.2 जागृति

3.6.3 असंतुलन

3.6.4 अभाव

3.7 नारी जीवन

3.7.1 मजबूरी

3.7.2 अनुसरण

3.7.3 □ीत हार

3.7.4 समझौता

3.7.5 सफलता

3.7.6 भ्रमण

3.7.7 सेन्स आफ बोरडम

3.7.8 निद्राहीनता

3.8 पारिवारिक समस्या

3.8.1 आज़ादी

3.8.2 त्रासदी

3.8.3 निःसहाय

3.8.4 पिता

3.8.5 पति-पूजा

3.8.6 स्नेहहीन व्यवहार

3.8.7 माँ का वात्सल्य

3.8.8 वृद्धावस्था की लापरवाही

3.9 सामाजिक विषमता

3.9.1 अंधविश्वास

3.9.2 आधुनिक समाज

3.9.3 मानसिक कुंठा

3.9.4 अस्तित्व

3.9.5 स्त्री शिक्षा

3.9.6 बुराई

3.9.7 स्त्री की पहचान

# अध्याय-III

# मन्नू भंडारी और अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में सामाजिक यथार्थ

## 3.1 सामाजिक यथार्थ

समाज का गतिमान चित्रांकन ही सामाजिक यथार्थ है। जिसमें संगति और विसंगतियों का समोवश होता है। जिसमें संगीत एवं विसंगतियों का समावेश होता है। विसंगतियों के अंतर्गत भ्रष्टाचार, शोषण, भेदभाव, कुरूपताएँ, पारंपरिक दबाव, मानसिक पीड़ा, जीवन की असफलता तथा आर्थिक समस्या इत्यादि समाहित होते हैं। समाज एक समूचे जन समूह का प्रतीक है, जिसमें अच्छाई और बुराई की अनेक छवियाँ दृष्टिगोचर होती हैं।

साहित्यकारों ने अनादिकाल से समाज के अनेक पक्षों को अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रतिबिंबित किया। साहित्य में मानव के प्रति यथार्थपरक दृष्टिकोण का जन्म आधुनिक काल से ही हुआ। तब से लेकर अब तक साहित्य के प्रत्येक विधाओं में यथार्थपरक दृष्टि का अंकन किया जा रहा है। इस तरह के दृष्टिकोण में समाज को अत्यन्त महत्व देकर सामाजिकता को परखते हुए सामाजिक यथार्थ का जिक्र करनेवाली लेखिकाओं में से मन्नू भंडारी जी और तेलुगु साहित्य की लेखिकाओं में अब्बूरी छायादेवी जी अग्रगण्य है।

## 3.2 व्यक्तित्व का महत्व

जीवन में हर एक की पहचान अपना एक विशेष महत्व के व्यक्तित्व से ही उत्पन्न होता है। वैसे में व्यक्तित्व का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान जीवन में दिया तो जाता है, चाहे वह अच्छे अथवा बुरे से संलग्न हो। लेकिन व्यक्तित्व का नाम स्मरण करते ही एक अच्छे खयालात की ओर ध्यान केंद्रित हो जाता है। मन्नू भंडारी और छायादेवी की कहानियों में दोनों तरह के व्यक्तित्व का आगमन होता है। जिसमें अच्छे और बुरे व्यक्तित्व का बोल-बाला है।

### 3.2.1 बंधन

समाज में बंधन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। लेकिन पारिवारिक बंधन अन्य बंधनों से सर्वोपरि है। आजकल के प्रौद्योगिकी युग तथा पाश्चात्य प्रभाव ने इन पारिवारिक बंधनों में बाधक उत्पन्न कर रहा है। मन्नू भंडारी की कहानी 'नकली हीरे' इसी समस्या की ओर संकेत करती है। जिसमें मिसेज सरन और इंदु के बीच का जो पारिवारिक संघर्ष है वह बंधन के मूल्य का प्रतीक है। मिसेज सरन् इंदु की दीदी है, जो वह धन को अत्यन्त महत्व दिया करती है। बहन इंदु व्यक्तित्व एवं मानवतावाद को ही महत्व देती है। मिसेज सरन की ओर से धन दौलत ही सब कुछ है, उसी में ही आदमी की जिंदगी सुखी बनने पर बल देती है। मिसेज सरन किसी-न-किसी बहाने बहन इंदु की गरीबी की हालत पर चिढ़ाती है। जब वह ये जान लेती है कि पति ने विश्वासघात किया तब से वह अपना विचार बदल लेती है। इसके विपरीत इंदु प्रेम विवाह करके जीवन का सच्चा अर्थ देती है और इस पर भी बल देती है कि धन की जिंदगी नहीं, जीवन के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है।

### 3.2.2 आदर्श

समाज में चारों के लिए उपयोगी बात आदर्श कहलाती है और कभी-कभी आदर्श समझने तथा सुधरने की प्रेरणा देती है। क्रांतिकारी महिलाओं में आदर्श की भावना अधिक होती है। भंडारी की ‘रानी माँ का चबूतरा’ क्रांतिकारी एवं आदर्श का प्रतीक है। समाज में बुरे या नासमझ लोग दूसरों का गलतफहमी करते हैं, लेकिन जब उनकी अपनी गलती का एहसास होने पर भी मानने को तैयार नहीं रहते। सहायता करने की बजाय कंजूस एवं स्वार्थी बन जाते हैं। समाज चारों का समूह है और वे चार में से कुछ आपस में विरोधी बन रहे हैं। ‘रानी माँ का चबूतरा’ की गुलाबी एक जुझारू नायिका है जो हमारे समाज के कड़वे यथार्थ से हर मोर्चे पर लोहा लेने को तैयार है। जिस कहानी में समाज गुलाबी के लिए सहायक बनने के बदले बाधक बन जाता है। जब गुलाबी की वास्तविकता का पता चलता है तब उसके प्रति गाँववालों के हृदय में आदर्श का भाव उत्पन्न होता है। शराबी पति को घर से निकालकर क्रांतिकारी महिला का स्थान कायम करती है। वह अपने बच्चों के लिए कई दिन भूखे रहकर उन्हें खिलाती है। लेकिन समाज इस बात को समझे बिना मज़ाक उड़ाते हुए बच्चों के प्रति गुलाबी को गलतफहमी पर निर्लक्ष्य भाव का तीर छोड़ते हैं।

अब्बूरी छायादेवी की ‘तना मार्गम्’ कहानी में वर्धनम्मा स्त्रियों के लिए एक आदर्श पात्र है। पति की मृत्यु के बाद बुढ़ापे में, वर्धनम्मा किसी पर निर्भर हुए बिना अपनी जीविका चलाती है। बेटे होते हुए भी वह निःसहाय एवं आत्मीयता का अभाव अनुभव करती है। आजकल के समाज में भी कई परिवारों में माता-पिता तथा अन्य वृद्धों की उपेक्षा की जा रही है। इस कहानी की वर्धनम्मा बुढ़ापे की समस्या पर अच्छी समझ रख कर जिंदगी से सतर्क रहती है।

### 3.2.3 पुनर्विचार

पुनर्विचार स्मृति की पहचान है। जीवन में विचार करने के साथ-साथ पुनर्विचार महत्वपूर्ण मायने रखता है। पुरुष तो हमेशा महाराज है, स्त्री को ही हमेशा उससे समझौता करना पड़ रहा है और पुरुष के हर एक रुचियों को ध्यान में रखकर चलना पड़ रहा है। स्त्री नौकरी करने पर भी अपनी स्थिति को बदल नहीं सकती। छोटे-मोटे विषयों को लेकर पति-पत्नी में झगड़े हो होते हैं, लेकिन तीसरे आदमी का आगमन गृहस्थ जीवन में परिवार विघटन का इशारा है। गृहस्थी में सुख का अनुभव करना है तो थोड़ा सा 'सेन्स आफ ह्यूमर' को अपनाना चाहिए। पति के प्रति पत्नी को प्यार और गौरव होना और पत्नी के प्रति प्यार और अधिकार होना अनादिकाल से आज तक साधारण विषय बन गया है। लेकिन यह अधिकार की भावना ही दोनों चाहे नौकरी करें या न करें स्पर्धा को पैदा करती है। दोनों को यह समझना तो जरूरी है कि वैवाहिक बंधन को हमेशा बनाए रखने के लिए अहंकार और एक दूसरे के प्रति अधिकार का त्याग करना चाहिए। इतना ही नहीं, हर एक को आत्म का मूल्यांकन करना जरूरी है, तभी हम सुधर सकते हैं, और सुधार भी सकते हैं। उपर्युक्त संदर्भ अब्बूरी छायादेवी की कहानी 'श्रीमती उद्योगिनी' से संबंधित है।

## 3.3 भेद-भाव

भेदभाव के अंतर्गत कई तरह की पद्धतियों का समावेश होता है। मुख्य रूप से लिंग भेद, बच्चों के प्रति भेदभाव और अन्य पारिवारिक भेद इत्यादि आते हैं। भेद में अच्छे और बुरे, ऊँच-नीच, कम और ज्यादा तथा अन्य प्रकार के वर्ग होते हैं। भेद का युग्म शब्द भाव भेद से ही संबंधित है, जैसा कि भाव से ही भेद का अर्थ खुलता है। भेद और भाव एक दूसरे के पूरक हैं।

### 3.3.1 लिंग-भेद

हमारे समाज में हर एक के परिवार में लिंग भेद किसी-न-किसी रूप से देखने को मिलता है, चाहे वह अपना भारतीय समाज हो या कोई दूसरा देश क्यों न हो। अब्बूरी छायादेवी जी की 'बोनसाय बतुकु' कहानी लिंग-भेद को लेकर है। परिवार में माता-पिता बच्चों के पैदा होते ही बेटे-बेटी का फरक दिखाते हैं। गाँव से बहन के घर आयी हुई दीदी बारिश होते समय बोनसाय पौधों को देखकर बहन से कहती है कि-"देखो अब वह बोनसाय पौधा देखने में बहुत सुंदर है, जैसे घर बसानेवाली स्त्री की भाँति। लेकिन कितना कोमल है देखो, तुम्हें हज़ारों आँखों से उसकी रक्षा करनी होगी। जरा सा भी तूफान हो जाये तो भी सह नहीं सकता। वह बोनसाय पौधा ही दूसरों पर निर्भर करता है तो दूसरों को छाया कैसे दे सकेगा। पुरुष और स्त्री को पालने में फरक रहने से ही नारी का जीवन भी बोनसाय जैसा हो गया है।"[1] अर्थात् स्त्री को भी किसी-न-किसी तौर पर पुरुष के जैसी स्वतंत्रता दी जाती है तो वह दूसरों पर निर्भर हुए बिना खुद के पैरों पर खड़े होकर दूसरों को सहारा दे सकती है। तब उनका जीवन सार्थक बन जाता है। इतना ही नहीं वह खुद की उन्नति के साथ-साथ परिवार तथा समाज की उन्नति में साथ दे सकती है। माता-पिता लड़कियों में बचपन से ही दुबके रहनेवाली मानसिकता की आदत डाल दिया है। लेकिन लड़के इस विषय से मुक्त हैं। इसलिए सहज रूप से लड़कियों की तुलना में लड़के अधिकतर आगे बढ़ने का मौका समाज से पाते हैं।

[1] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.78

### 3.3.2 लालित्य

बच्चों के जन्म से लेकर कुछ वर्ष तक के लालित्य में कोई फरक नहीं रहता है। हाँ यह कभी-कभी अनपढ़ घरों में अलग सा प्रतीत होता है, जिसमें लड़की और लड़के के नाम के बहाने भेद होता है। लड़की उनके लिए एक तरह से बोझ हैद्व क्योंकि जितना उसे पढ़ायेंगे, उससे भी उत्तम विद्वान वर को ढूँढ़ना पड़ेगा। यही उनकी मानसिकता है। बेटी के बचपन से लेकर पिता के बुढ़ापे तक पिता के अनुशासन, व्यवहार इत्यादि के कारण उनके प्रति भय एवं दूरी का समावेश स्वाभाविक ढंग से उत्पन्न होता है। इतना ही नहीं, उनसे मिलजुल कर रहने का साहस भी नहीं कर पाते। पिता के प्रति बेटी की मानसिकता 'स्पर्श' कहानी में स्पष्ट रूप से इस प्रकार दर्शाया गया है-"बेटों के लिए जीवन भर तड़पनेवाले पापा को आखिर में हम (लड़कियाँ) ही बचे हैं। जीवन की चरम दशा में सहारा देनेवाला वंशोद्धारक एवं इकलौता बेटा चल बसा, दुर्भाग्य का मतलब शायद यही होगा।"[2]

समाज मं ज्यादातर बेटियाँ अपनी शादी के बाद भी पिता की देखभाल करती हैं। ठीक उसी तरह का माहौल बेटों में दिखाई नहीं देता, जैसा कि वे सुसंस्कार में आने के बदले कुसंस्कार जैसे शराब, आवारापन इत्यादि में ढलकर पिता की लापरवाही करते हैं। जमाने से चली आ रही एक कहावत है कि बेटा ही माता-पिता को घोर नरक से बचाता है लेकिन वही माता-पिता को जिंदा होते हुए भी नरक दिखाता है। अक्सर परिवारों में बेटियाँ सकारात्मक रूप से और बेटे नकारात्मक रूप से पेश आते हैं। इस तरह की समस्याओं को झेलनेवाली लड़कियाँ अवश्य कमजोर होती हैं। अपने विचारों को व्यक्त करने

---

[2] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.123

में, किसी काम के लगाव में और फैसला करने में संकोच और भय से असमर्थ बन जाती है।

## 3.4 मानसिक संघर्ष

व्यक्ति की स्मृति मानसिक स्थिति से ही निर्भर है और जीवन यापन में सोच समझ तथा सृजनात्मकता इत्यादि विषयों में मानसिक स्थिति की भूमिका प्रमुख है। तनाव, अकेलापन, बेरोज़गारी, सामाजिक कुरूपताएँ, दबाव इत्यादि ने भी मानसिक स्थिति को बिगाड़ देती है। ऐसी कई समस्याओं का दर्शन मन्नू भंडारी एवं अब्बूरी छायादेवी की कहानियों में होता है।

### 3.4.1 द्वंद्व

'क्षय' कहानी के द्वारा मन्नू भंडारी ने अविवाहित मध्यवर्गीय लड़कियों की मनःस्थिति और बिगड़ी हुई आर्थिक स्थिति के मानसिक द्वंद्व को अभिव्यक्त किया। बचपन में ही कुंती की माँ की मृत्यु हो जाने से क्षयग्रस्त पिता की देखभाल, छोटे भाई की पढ़ाई का पूरा बोझ कुंती के सर पर पड़ता है। इस कारण कुंती के मन में एक प्रकार की मानसिक कुंठा उत्पन्न हो जाती है। क्योंकि घर में उसे कभी भी शांति नहीं मिली।

एक तरफ पिता और एक तरफ आर्थिक स्थिति तथा अन्य छोटी-छोटी समस्याएँ कुंती की मानसिक स्थिति को द्वंद्व के घेरे में डाल देते हैं। कुंती ईमानदारी का निर्वाह करती है, इस ईमानदारी का बीज तो पिता से ही प्राप्त होता है। मगर पिता से कुंती को ईमानदारी का पहला झटका लगता है, यह जो झटका टुन्नी के संदर्भ में लगता है, तो कुंती की आस्था टूट जाती है। इसका सबूत इस प्रकार है-"एक बार कोशिश करके इसे चढ़वा तो दे, तेरी हेडमास्टर साहब से अच्छी जान-पहचान है न? ... वहाँ भी जाए तो उसका साल तो बच जाए।"[3]

---

[3] मन्नू भंडारीःश्रेष्ठी कहानियाँ-पृ.72

टुन्नी अपनी असमर्थता की परवाह करते हुए ऊपर से दीदी को प्रधानाध्यापक से रिकमंड न करने पर दीदी पर गुस्सा निकालते हुए पत्र लिखता है-"दीदी, मेरा मन यहाँ ज़रा भी नहीं लगता। सारे समय पापा की और तुम्हारी याद आती रहती है। स्कूलवालों ने भी मुझे आठवीं में ही भर्ती किया है। उस दिन तुम मेरे हेडमास्टर साहब के पास चली जाती तो कितना अच्छा होता, पूरा एक साल ब□ □ाता। तुमने मेरा इतना सा काम भी नहीं किया, दीदी पूरा एक साल बिगड़वा दिया।"[4]

अब्बूरी छायादेवी की कहानी 'मोग्गु' में नारी की स्थिति ऐसी है कि वह पति और बेटे की लड़ाई में अपना मन दोनों की ओर आकृष्ट करती है। एक तरफ मन और एक तरफ न्याय के जाल में फंसकर कराहती है। इसमें माँ का द्वंद्व पति और बेटे के बीच गुजरता है और यह अपने आप में सोचने लगती है-

"अनुशासन के नाम पर उसे वे अपने से दूर कर लेने पर गलत तो नहीं? हर एक के लिए मुझ से ही पूछ बैठता है, पापा से पूछने के लिए कहने पर पूछता नहीं। उसके हर एक विनती के लिए मेरा सहारा चाहिए। इसमें तो मेरी बात ठहराएगा? नहीं, वह अपनी स्वेच्छा को सदा इस्तेमाल करता रहता है।"[5]

उपर्युक्त वक्तव्यों से यह पता चलता है कि द्वंद्व मनुष्य को संदेह में डाल देता है। द्वंद्व अगर सकारात्मक रूप धारण कर लेता है तो मन एवं बंधन हमेशा के लिए दृढ़ एवं अटूट रहता है, वरना परिवार एवं अन्य मामलों में सोच निरर्थक बन जाता है।

---

[4] मन्नू भंडारी:श्रेष्ठी कहानियाँ-पृ.72

[5] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम-पृ.222

### 3.4.2 अकेलापन

अकेलापन समाज में अत्यन्त दयनीय एवं दुःखदायक सिद्ध होता है। इस कोटि में बच्चे, स्त्री एवं पुरुष तथा वृद्ध भी शामिल हैं। बालक एवं बालिकाओं को लेकर अगर जिक्र किया जाए तो ये घटनाएँ घटित हो रही हैं कि उनके माँ-बाप कहीं छोड़ देने के संदर्भ हैं, तो कहीं उनकी मृत्यु के संदर्भ भी हैं ओर कहीं बालक एवं बालिकाएँ अनाथ आश्रमों में पाले पोसे जा रहे हैं। कुछ बालक व बालिकाएँ रेल फ्लैटफार्म व बस स्टेशन व अन्य स्थानों पर भीख व छोटे-मोटे काम करते हुए जीवन गुजार रहे हैं। अकेलेपन के सिलसिले में पुरुष की तुलना में स्त्री को अधिक से अधिक समस्याएँ घेरे हुए है। यह जो समस्याएँ बुढ़ापे में पुरुष को ज्यादा कुंठित करती हैं लेकिन यौवन में ऐसी स्थिति नहीं। इन सारी गतिविधियों का मूल आधार स्तंभ समाज ही है, जबकि स्त्री अकेलेपन से जूझती रहती है, उसके चारों ओर कहीं-न-कहीं समस्याओं का जाल फैला दिया जाता है। सामाजिक तौर पर मजाक एवं तनाव वैयक्तिक तौर पर मानसिक एवं शारीरिक अत्याचार जैसी समस्याएँ स्त्री को बुढ़ापे तक तंग करती हैं।

सोमा बुआ बुढ़िया है, परित्यक्ता है और अकेली है। सोमा बुआ का जवान बेटा हरकू की मृत्यु होने के तुरंत में ही उनकी अपनी जवानी चली गई। पति को पुत्र वियोग का ऐसा सदमा लगा कि वे पत्नी, घर-द्वार तजकर तीरथ-वासी हुए और परिवार में कोई ऐसा सदस्य था नहीं जो उनके एकाकीपन को दूर कर सकेगा। जिसने वेद-मंत्र के साथ जीवन साथी बनकर रहने का वचन दिया था वही अपने वचन को तोड़कर पुत्र वियोग के बहाने दूर चला जाना और बुढ़ापे जिस बेटे के सहारे में उसे रहना था उसी जवान बेटे का अनंतवायु में लीन हो जाना इन दो हृदय-क्षीण घटनाओं से बुआ विराट शून्य में भटकने

लगती है। सोमा बुआ अपनी गृहस्थी को बचाने के लिए परिस्थितियों के साथ समझौता करनेवाली परंपरावादी भारतीय महिला के रूप में सामने आती है। पति पर निर्भर और विश्वास के साथ स्त्री नई उम्मीदें और नये सपने लेकर उनके जीवन में प्रवेश करती है तो जब पति दुःख के बहाने पत्नी को परित्यक्ता है। तब उस स्त्री की वेदना बाढ़ में डूबी हुए गाँव की तरह होती है और वह आत्मीयता के लिए तड़पती रहती है।

### 3.4.3 सज़ा

सज़ा शब्द से ही किसी-न-किसी गुनाहों का प्रतिफल स्मरण में आता है। ज्यादातर सज़ा गुनाहगारों के लिए प्रयुक्त होनेवाला शब्द है। लेकिन आजकल यही शब्द बुद्धिजीवी को संकोच में डाल देता है। निर्दोष को भी आजकल का कानून आँखें मूंदकर सज़ा दे रही है और कई गलतफहमियों पर पत्रकार तथा जन-जाति लोगों को गिरफ्तार कर देने के साथ-साथ कभी-कभी उन पर बंदूक चलाकर आतंकवादी तथा मावोवादी का धब्बा लगा रही है। अन्याय के प्रति न्याय की जीत स्वाभाविक है मगर न्याय के प्रति अन्याय की दशा दर्दनाक है। यह जो दर्दनाक विषय आगे चलकर सज़ा में परिवर्तित हो जाता है। मन्नू भंडारी की ‘सज़ा’ कहानी शीर्षक से ही गंभीरता से भरा संदेश देती है। इसमें एक निर्दोष व्यक्ति एवं परिवार के सदस्यों का जीवन किस तरह टूटन-फूटन हो जाता है, इसको अत्यन्त मार्मिकता एवं सुस्पष्ट ढंग से पेश किया। इस कहानी में न केवल एक ही निर्दोष को सज़ा भोगनी पड़ती है बल्कि समूचा परिवार भी सज़ा का शिकार बन जाता है। पत्नी, बच्चे, माँ-बाप आर्थिक एवं मानसिक रूप से भयभीत हो जाते हैं।

"वह मेरे पप्पा नहीं हैं। जेल वालों ने उन्हें बदल दिया। एक अजीब-सा भय मन में समाने लगा कि अब शायद पप्पा कभी प्यार नहीं करेंगे। और

सचमुच उसके बाद मैंने कभी उनका प्यार नहीं पाया आज तक नहीं। शायद वे अब किसी से मोह नहीं रखना चाहते। कहीं फिर सज़ा हो गई तो?"[6]

उपर्युक्त कथन इस बात का एहसास दिलाता है कि अन्याय की चोट सिर्फ वैयक्तिक न रहकर व्यापक रूप से सामूहिक बन जाती है। न्याय व्यवस्था में अदालत के पैमाने पर दोषी को निर्दोष, निर्दोष को दोषी बनाने की परंपरा आ भी विद्यमान है।

### 3.4.4 बुढ़ापा

कुछ वर्षों के पूर्व बड़ों के लिए बुढ़ापे का जीवन हकदार और अधिकार का रहा करता था। लेकिन आज हकदार या अधिकार का पता तो गायब है, कम-से-कम उनकी देखभाल का दायित्व लेने के लिए न तो बेटा तैयार है न बहु-बेटी। छायादेवी की कहानी 'उडरोज़' में उडरोज एक फूल है जिसका प्रतीक बुढ़ापा है। मानवीयता के अभाव में बुढ़ापे की जिंदगी निस्सहाय एवं निरूपयोगी सा लगती है। इसका मूल कारण मानव के हृदय में मानव के प्रति जटिलता का भाव तथा प्रतिफल दृष्टिकोण ही है। वृद्धों (बड़ों) के प्रति गौरव एवं अभिमान की परंपरा गायब हो गई है और उनके वक्तव्यों का पालन भी नहीं के बराबर है। उडरोज कहानी में बेटा अपनी बूढ़ी माँ की इच्छुक बात को इनकार करते हुए बूढ़ी उडरोज पौधे को उखाड़ फेंक देता है तब ऐसे माहौल से बूढ़ी माँ का मन बहुत दुखी हो उठता है। वह मन ही मन सोचने लगती है कि आगे चलकर मुझे भी इसी हालत को झेलने की संभावनाएँ हो सकती हैं। अब्बूरी छायादेवी की 'उडरोज' कहानी में पोते प्रेम एवं लालित्य के नाते बूढ़ी माँ के पास आदर के साथ भागकर गले लगाने से दस कोस दूर रहते हैं। तकनीकी के जमाने में न केवल बड़े ही मानसिक रूप से वृद्धों के प्रति दूर हैं बल्कि बच्चे भी यानि कि

[6] मन्नू भंडारी, सज़ा-पृ.62

पोता-पोती वीडियो गेम्स, टेलिविजन पर प्रदर्शित कार्टून तथा अन्य खेल-कूद के पैमान पर वृद्धों के लालित्य आलिंगन से दूर हैं। इस संदर्भ में बूढ़ी माँ अपने अंतर्मन की वेदना को गुनगुनाती है कि-"सुकून की कुर्सी में लेटकर नींद में खिसकना, पोते सभी से खेलना, कहानियाँ, बातें सुनाना, अडोस-पडोस लोगों से, आते-□ाते रिश्तेदारों से वार्तालाप करना, घरवालों पर अपना अधिकार जताना, बुढ़ापा कितना सुहावना समझती थी बचपन में। अब मेरे तक आते ही प्रतीत हो रहा है कि गाँवों में बुढ़ापे को गुजारने में, शहरों में गुजारने में बहुत फरक है। इस महानगर में जिसको जो ही अपना खातिर जैसा अछूत के नाते दूर का अवलंबन कर रहा है।"[7]

अधिकांश पुत्र एवं पुत्री की आलोचना वृद्धों के प्रति कहने की जरूरत नहीं के बराबर है। धन-दौलत तथा अर्जित मूल्य पर ही मानवीयता का प्याला वृद्धों के सामने रखा करते हैं। वृद्धगण बच्चे एवं पोता-पोती इत्यादि को दृष्टि में रखकर खूब पैसा जुटाकर खुश रखना चाहते हैं और साथ-साथ खुशी को बाँट लेना चाहते हैं। मगर उनकी इस तमन्ना को आज की सामाजिक स्थिति लेट रही है। इस अमानवीयता के दर्पण को ही उडरोज़ कहानी पर्दाफाश करती है।

### 3.4.5 बचपन

बच्चों के लिए बचपन एक यादगार चिह्न है। बचपन का नाम लेते ही खुशियाँ, मिठाइयाँ, खेल-कूद, माता-पिता का लालित्य, नाना-नानी, दादा-दादी इत्यादि का प्यार आँखों के सामने आता है। लेकिन आजकल की शिक्षा व्यवस्था, घर का अनुशासक वातावरण, बच्चों के प्रति आर्थिक सतर्कता इत्यादि के कारण कठिन से कठिन नियम बच्चों पर लागू हो रहे हैं। स्कूल में दाखिला लेने का उम्र प्रतियोगिता की वजह से 4 से 3 बन गया है। इ-टेक्नो स्कूल, इंटरनेशनल स्कूल, ओलंपियाड स्कूल इत्यादि बच्चों पर उम्र से ज्यादा बोझ

[7] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम-पृ.129

डाल रहे हैं। इसके अलावा माता-पिता के नियम और निर्णय भी बाधक बन गये हैं। सयानी उम्र से बड़े अथवा कुछ छोटे लोगों पर गहरा प्रभाव नहीं डालता लेकिन इस पर बच्चों की मानसिकता अत्यन्त गहरी दीख पड़ती है। जब भी बच्चों के ऊपर मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किसी भयानक घटना/दर्दनाक घटना तथा आनंद एवं ऐच्छिक संदर्भ प्रारंभ में उत्पन्न हो तो वह जीवन भर के लिए स्थिर रहता है। मन्नू भंडारी की 'सयानी बुआ' कहानी उपर्युक्त संदर्भों की समस्याओं का दस्तावेज है। इसी तथ्य का उद्धरण इस प्रकार है-"सारा काम वहाँ इतनी व्यवस्था से होता, जैसे सब मशीनें हों, जो कायदे में बँधी, बिना रुकावट अपना काम किया करती हैं। ठीक पाँच बजे सब लोग उठ जाते, फिर एक घंटा बाहर मैदान में टहलना होता, उसके बाद चाय-दूध होता। उसके बाद अन्नू को पढ़ने के लिए बैठना पड़ता था। भाई साहब भी तब अखबार और आफिस की फाइलें आदि देखा करते। नौ बजते ही नहाना शुरू होता। जो कपड़े बुआ जी निकाल दें, वही पहनने होते। फिर कायदे से आकर मेज़ पर बैठ जाओ और खाकर काम पर जाओ।"[8] घर संभालना, परिवार के सभी सदस्यों का ख्याल रखना तो अच्छी बात है, लेकिन अपने व्यक्तित्व को दूसरों पर हाव करके उन्हें नुकसान और कष्ट पहुँचाना ठीक नहीं है। कुछ हद तक समय की पाबंदी, सुव्यवस्था ठीक तो है। जब यही नियम पाबंदी जिस परिवार में अधिक होती है, जब वह घर नहीं मकान कहलाता है। इसलिए जिंदगी यांत्रिक बन जाती है, इतना ही नहीं साथ ही परिवार के सदस्यों की इच्छाएँ, स्वतंत्रता, भवनाएँ, स्नेह, प्रेम सब हरण की □ाती हैं।

[8] मन्नू भंडारी, मैं हार गई-पृ.66

## 3.5 मध्यवर्गीय जीवन

यह जो वर्ग समाज का दूसरा वर्ग है, जिसमें बुद्धिजीवी, किसान, मज़दूर तथा अन्य कर्मचारी आते हैं। यही लोग समाज से हमेशा संघर्ष करते रहते हैं। निम्न वर्ग और मध्यवर्ग से ही सारी दुनिया चल रही है। मगर उनकी समस्याओं का हल करने को कोई तैयार नहीं है।

### 3.5.1 पिछड़ापन

शिक्षा रहित समाज हमेशा पिछड़ा हुआ रहता है। बेरोजगारी की समस्या को भी पिछड़ेपन का प्रतीक मान सकते हैं, कभी-कभी यह जो बेरोजगारी, जनसंख्या की वृद्धि तथा राजनैतिक अस्थिरता के कारण हो सकता है। पिछड़ापन न केवल शिक्षा रहित समाज अथवा बेरोजगारी को प्रस्फुटित करता है, साथ ही अंधविश्वास, धार्मिक, कट्टरता, रूढ़िवादिता तथा भोलेपन को बढ़ावा देता है।

गाँववालों की दृष्टि में गुलाबी विद्रोहिणी और परंपरा विरोधी तथा स्वावलंबन में विश्वास रखनेवाली है। वह संपूर्ण आत्मविश्वास के साथ गाँववालों का सामना करती है। वह भूखे रहकर बच्चों को खिलाती है मगर किसी की सहायता के लिए हाथ आगे नहीं बढ़ाती। सबसे पहले वह अपने शराबी पति को घर से निकालकर परंपरावादी वैवाहिक संप्रदाय को तोड़ती है। आज का भारतीय गाँव महानगरीय प्रभावों के कारण बहुत बदल गया है और कहीं-कहीं इसके गहरे प्रभाव वहाँ के जीवन को नरक के समान लग रहा है। यह कहानी पूरे भारतीय ग्रामीण परिवेश की मानसिकता से जुड़ी है। हमारी जड़ परंपराएँ और संकुचित दृष्टियाँ न जाने कितनी पीढ़ियों को तंग कर रही हैं।

### 3.5.2 अध्यापक

पूर्व काल में अध्यापकों को ब्रह्म, विष्णु एवं महेश्वर के समान माना जाता था। लेकिन आज गुरु को एक कामकाज़ आदमी की तरह मानने की धारणा बन गयी है। आजकल की शिक्षा संस्थाएँ अध्यापकों को साक्षात्कार के बहाने पैसों के हिसाब-किताब पर खरीद रहे हैं। आजकल अध्यापकों की स्थिति अत्यन्त दयनीय एवं दुःखदयक है, वे काबूली वाले के पास सूद पर पैसा लेकर ऋणदाताओं से कई तनाव झेल रहे हैं। मन्नू भंडारी की 'क्षय' कहानी की नायिक 'कुंती' एक आदर्श एवं स्वाभिमानी अध्यापिका है। अध्यापकीय जीवन के प्रति उसके मन में बड़ी ऊँची कल्पनाएँ थीं तथा इसी दृष्टि से उसने इसे अपनाया था। अध्यापकीय और ट्यूशन जैसे कार्यों को वह अपने आदर्शों के सामने हेय मानती रही थी पर आर्थिक और पारिवारिक दबाव के एक ही आघात ने उसे यथार्थ की जमीन दिखा दी। पिता की क्षय की बीमारी तथा भाई की पढ़ाई के खर्च के दायित्व बोध ने उसे वही करने के लिए विवश किया जिसे वह आज तक घृणा की दृष्टि से देखती थी। वह अध्यापिका का कार्य भी करती थी और ट्यूशन भी करती थी। जिसे उसने कभी सम्मानपूर्ण नहीं समझा।

### 3.5.3 व्यापार

व्यापार में उच्च, मध्य और निम्न श्रेणियाँ हैं। जिसमें से उच्च वर्गीय व्यापार संस्थाएँ अधिक-से-अधिक लाभ अर्जित कर रहे हैं। शेर के नाम पर, ईक्विटीस के नाम पर मध्य वर्ग एवं गरीब लोगों से पैसा इकट्ठा कर उत्पादक मूल्य का नाम दिया जाता है। इस उत्पादक मूल्य से कंपनी या संस्था खोली जाती है। लेकिन बात यह है कि उस कंपनी से लाभान्वित सामान्य आदमी व शेर होल्डन न होकर संस्थापक तथा अन्य सदस्य होते हैं। मध्य एवं निम्न वर्गीय व्यापारों में ऐसे माहौल को झुठलाना पड़ता है और कभी-कभी यह भी होता है कि जिससे वह लाभ उठाने की संभावना हो तो कभी नष्ट की खाई में गिरने की।

कर्फ्यू के समय में पैसे कमाने के लालच में हर इन्सान की दृष्टि किस तरह बदल जाती है, उस समय सामान्य मानव के हालचाल आदि स्थितियों को कहानीकार अब्बूरी छायादेवी के 'अवकाशम्' कहानी में मार्मिक एवं सहज ढंग से प्रस्तुत किया। इसी संदर्भ में मकान का मालिक कहता है-"पुरानी बस्ती में रही हमारी दुकान लुट गयी। बहुत नुकसान हुआ। आप भाड़ा बढ़ाने से ही हम को बसेगा। अगर आपको तकलीफ है तो दूसरा मकान ढूँढ़ लीजिए।"[9] इस तरह निष्कर्ष के रूप में कह दिया। सच तो यह है कि इन्हीं से दिये जोनवाले भाड़े से ही वे जी नहीं रहे हैं। उनके दूसरी बस्तियों में भी मकान हैं।

### 3.5.4 न्याय

न्याय कानून का हिस्सा है। कानून न्याय के प्रति कितना सतर्क है, वह भगवान ही जाने। धर्म का जमाना तो चला ही गया। लेकिन समाज में धर्म और न्याय कहीं-कहीं देखने को मिलता है। धर्म के नाम पर, कानून के नाम पर तथा न्याय के नाम पर भ्रष्टाचार दगेबाज़ इत्यादि पनपने लगी, इस घेरे में मध्यवर्ग ही पीड़ित है, उच्च वर्ग रिश्वत देकर धर्म, कानून और न्याय को खरीदने के संदर्भ समाज में पाये जाते हैं। मन्नू भंडारी के 'सज़ा' कहानी का केंद्र हमारी शासन व्यवस्था और न्यायतंत्र की विसंगतियाँ हैं। परिस्थितिवश सुखी परिवार टूटकर बिखर जाता है। किशोरी आशा का संवेदनशील ह्दय इन तमाम परिस्थितियों को अच्छे से समझ लेती है। बीस हज़ार रुपये के गबन का झूठा इलज़ाम लग जाने से आशा के पिता को जेल हो जाती है। तब परिवार की हालत अत्यन्त दयनीय हो जाती है। आर्थिक अभाव के कारण बच्चे को काका के यहाँ मुसीबत के दिन काटते हैं और माँ अपने भाई के यहाँ। इस तरह एक सुखी संस्कारी परिवार न्याय की प्रक्रिया की चपेट में फँसकर उजड़ जाता है।

---

[9] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम (मौका)-पृ.139

### 3.5.5 राजनीति

'राजनीति' शब्द सुनते ही कभी मज़ाक, कभी गंभीरता महसूस होती है। यह गंभीरता और मजाक सामान्य जनता से खेलती है। आजकल की राजनीतिक स्थिति ऐसी हो गयी है कि सच्ची जनतांत्रिक व्यवस्था अपनी पहचान खो बैठी है। उदाहरण के लिए अखबार को ले लें तो पता चलेगा कि अखबार में सिर्फ 25% तक तो सामान्य जन तथा अन्य का समाचार मिलता है, बाकी सब राजनैतिक बकवास। अगर इसमें सच्चाई हो तो मान सकते हैं लेकिन यह सब आपस में उन लोगों की आलोचनाएँ हैं, जिन्होंने राजनीति को लेकर झगड़ालू परंपरा बनाई। मन्नू भंडारी द्वारा लिखित 'मैं हार गई' कहानी समकालीन नेताओं पर जबरदस्त व्यंग्य है। लेखिका चाहती है कि एक आदर्श नेता का निर्माण हो परंतु पहले नेता की गरीबीपन तथा दूसरे नेता की अमीरीपन से उनकी चाह निरर्थक हो जाती है।

लेखिका ने यह स्वीकार किया कि आज का नेता सुरा-सुंदरी का सेवन करता है। वह भ्रष्ट है तथा गीता का उपदेश झाड़ता है। साधन सुचिता का जमाना काल बाह्य हो गया। आज तो कुर्सी और सत्ता की मंजिल तक पहुँचना है, चाहे जिस रास्ते से पहुँचे। देश और समाज की ऐसी स्थिति में लेखिका आदर्श नेता की कल्पना में भी निर्माण नहीं कर पाती, वह वस्तुस्थिति के सामने हार जाती है।

### 3.6 आर्थिक समस्या

मध्य युग से आर्थिक गतिविधियाँ प्रचुरण में आने लगीं। उससे पूर्व की अवस्था में आर्थिक गतिविधियों की कोई जरूरत नहीं थी, जैसा कि उस समय वस्तु विनिमय की परंपरा थी साथ ही फसलों की कमी न थी। बाद में चलकर आदान-प्रदान के माध्यम को ढूँढ़ने के लिए आर्थिक मुद्रण की सहायता लेनी पड़ी। लेकिन आज आर्थिक विषय की रूपरेखा बदल गई है। यह जो आर्थिक

सिलसिला आदान-प्रदान के लिए उपयोगी न होकर, वैयक्तिक, सामूहिक अथवा रा□नैतिक के लिए स्वार्थपरक माध्यम बन गया। धनवान और भी धनवान बनने की परंपरा आने लगी, चाहे वह व्यापार से संलग्न हो अथवा स्वार्थ से संलग्न हो या राजनीति से संलग्न हो। आज के समाज की आर्थिक समस्या का झमेला मध्यवर्गीय एवं निम्नवर्गीय जनता को ही घेर लिया। नैतिक मूल्यों के पतन के कारण निःसहाय जनता की सहायता नहीं के बराबर है, अगर इसको पूर्व अवस्था से तुलना की जाय तो पूर्व अवस्था में सहायता को सबसे पहला सामाजिक धर्म अथवा उत्तम कार्य माना जाता था। लेकिन यह स्थिति आज नहीं है, कई लोग आर्थिक समस्याओं से रगड़े जा रहे हैं, जिसमें किसान, मज़दूर एवं अन्य कामकाजी लोग पीड़ित हैं।

### 3.6.1 हैटेक शोषण

चिकित्सक रोगी की रक्षा करने के बदले भक्षक बन रहा है। कई चिकित्सक चिकित्सा के नाम पर दवाएँ, सुइयाँ इत्यादि लिखकर आर्थिक शोषण कर रहे हैं। होटलों में 5 नक्षत्रवाले होटलों जैसे अस्पतालों में भी 5 नक्षत्र वाले अस्पताल का निर्माण किया जा रहा है। जिसमें ज्यादा-से-ज्यादा शुल्क वसूल कर रहे हैं। कभी-कभी ऐसी घटनाएँ घटित हैं कि मुर्दों को भी जिंदा कहकर चिकित्सा कर रहे हें। यह आर्थिक लालच में एक अमानवीय घटना है। इसका ज्वलंत उदाहरण अब्बूरी छायादेवी के 'आखरि ऐदु नक्षत्रालु' कहानी है। इस कहानी में डाक्टर वर्ग आजकल के पूँजीवादी वर्ग का प्रतीक है तो माधवराव, करुणा, अनुपमा आदि मध्यवर्ग का प्रतीक है। माधवराव की जान बचाने के नाम पर 50 आदमियों का खून चूस लेते हैं और पैसे ज्यादा लेने के लिए टेस्ट पर टेस्ट करते हैं, लेकिन यह सब माधवराव को बचाने के लिए नहीं। उन डॉक्टरों और माधवराव परिवार के बीच 'खून' का रिश्ता, 'बिल' के रिश्ते के बिना,

रोगी और चिकित्सक का कोई नैतिक रिश्ता नहीं। यह कारपोरेट संस्कृति का ज्वलंत दस्तावेज़ है।

### 3.6.2 जागृति

जीवन में आर्थिक स्थिति को लेकर सतर्क रहना हर एक के लिए जरूरी है, वरना आजकल जिंदगी काटना मुश्किल है। समाज में मानवीयता के बदले पैसों को महत्व दिया जा रहा है। ज्यादातर बुढ़ापे में कोई ख़याल रखनेवाले नहीं रहते हैं, जिसकी वजह से उनको कहीं-न-कहीं स्थिर संपत्ति या तो धन से लगे रहना अनिवार्य-सा बन गया है। इसका मूल कारण है मानवीयता का अभाव। जिसके हाथों में वे पाले जाते हैं, उन्हीं को घर से बाहर कर दिया जा रहा है। समकालीन स्थितिगतियों से वृद्ध जागृत होकर गंभीरतमा से जीवन जीना सीख रहे हैं। इन तमाम परिस्थितियों का यथार्थ अंकन अब्बूरी छायादेवी के 'तना मार्गम्' कहानी में चित्रित किया गया। वर्थनम्मा एक ऐसी महिला है, पति के गुजरने के बाद बुढ़ापे में बच्चों के होते हुए भी बेसहारा बन जाती है। फिर भी पति के द्वारा अपेन नाम पर लिखे मकान के सहारे दूसरों पर निर्भर हुए बिना पूरे आत्मसम्मान के साथ अकेली जीती है।

### 3.6.3 असंतुलन

प्रगति के संदर्भ में संतुलन की स्थिति नहं होती बल्कि नैतिक, सामाजिक, मानसिक, शारीरिक इत्यादि अंशों में तो संतुलन का होना अत्यन्त जरूरी है। आर्थिक स्थिति तमें संतुलन की भी जरूरत है, अगर व्यक्ति के पास आर्थिक संतुलन नहीं है तो उसमें परवाह, चोरी, डकैती, गर्व, हिंसा इत्यादि का आगमन होता है। लेखिका मन्नू भंडारी ने 'मैं हार गई' कहानी के माध्यम से समाज के दो भिन्न वर्गों से दो भावी आदर्श नेता के निर्माण कार्य में असफल होकर निर्देशित किया है कि हमारे आधुनिक सामाजिक संदर्भों में किसी आर्शवाद को लेकर चलना संभव नहीं है। यथार्थ हमारे जीवन के साथ इतनी गहराई से जुड़ा है कि

हम उनकी उपेक्षा करके नहीं रह सकते। आर्थिक अभाव के कारण पहले नेता चोरी करने के लिए मज़बूर हो जाता तो दूसरे नेता के लिए आर्थिक संपन्नता ही उनके अधःपतन का कारण बन गई। इस तरह हम कह सकते हैं कि समाज में प्रमुख समस्या आर्थिक असंतुलन की है। इस असंतुलन के कारण समाज को विकृतियों एवं मूल्य हीनता की जिंदगी जीना पड़ रहा है। अर्थात् आर्थिक संतुलन ही समाज को कई विकृतियों से बचा सकता है।

### 3.6.4 अभाव

आर्थिक अभाव मानव को कई तरह से कमज़ोर बना देता है। अगर इसके प्रति सतर्क नहीं रहें तो जीवन यापन मुश्किल बन जाएगा। इसीलिए कई लोग अनेक संस्थाओं में धन की बचत के लिए खातेदार बन रहे हैं। कई लोग आर्थिक अस्थिरता के कारण पछताते हुए आत्महत्या भी कर रहे हैं। इस श्रेणी में सबसे पहले किसान व मज़दूर आ ठहरते हैं। वे ऋणदाताओं के पास ऋण लिया करते हैं, मगर जीवन भर उस ऋणदाता के ऋण ग्रस्त ही बनकर रह जाते हैं। मन्नू भंडारी के 'सज़ा' कहानी में एक ओर न्याय के विलंब पर मार्मिक व्यंग्य है तो दूसरी ओर आर्थिक अभाव के कारण परिवार में आनेवाले बिखराव का मर्म स्पर्शी चित्रण है। उधर न्याय मिलने में देरी हो रही है, पापा 'सस्पेंड' हैं, चाचा, मामा, दादा परेशान हैं, पैसा नहीं, बच्चे निरीह एवं अनाथ हो गए हैं। माँ को राज यक्ष्मा घेरतासा लग रहा है और इधर कोर्ट है कि तारीखों पर तारीखें बढ़ रही हैं। दिन कठिन हो गए हैं पर न्याय कहाँ इन बातों पर विचार करता है। संघर्ष और संकट के इन दिनों में लेखिका ने अपने कहलाने वाले तमाम लोगों का उथलपन भी उभारकर सामने रख दिया है। इन सारी दुर्दशाओं को देखकर आधुनिक न्याय को लेकर कई प्रश्न उठ खड़े होना स्वाभाविक है।

## 3.7 नारी जीवन

नारी जीवनारंभ से लेकर जीवांत तक अनेक समस्याओं की शिकार बन रही है। नारी को पैदाइश से ही लिंग भेद पर महत्वहीन मानने की परंपरा आज भी जारी है। शिक्षा-दीक्षा, धन-दौलत, गौरव-गान इत्यादि के पैमाने पर भी स्त्री की उपेक्षा की जा रही है। शिक्षा के संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा तक पढ़ाने की परंपरा तथा सहगामी क्रियाएँ जैसे खेल-कूद में भाग न लेने की इज़ाजत एवं योग्यता के अनुसार रोज़गार बनने का मौका मिलने पर भी नौकरी की अस्वीकृति इत्यादि कई परिवारों में नारी की आज़ादी को छीन लेने के नमूने हैं। दुनिया आधुनिकता से उत्तराधुनिकता की ओर बढ़ने पर भी नारी के प्रति पुरुष की मानसिकता आधुनिक नहीं बनी। स्त्री की मुक्ति अत्यधिक रूप से पुरुष के समझौते पर संभव है। यह कभी-कभी दोनों के संबंध में सिद्ध है।

### 3.7.1 मजबूरी

कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी समय इनसान कुछ सिलसिलों में मजबूर होता है। यह मजबूरी किसी के लिए जीवन रोटी हो तो किसी के लिए मौज़ और मस्ती। जीवन रोटी के संदर्भ में नारी का संघर्ष अत्यन्त दयनीय है, इसमें नारी कई तरह के कामकाज करके जीवन काटती है। वास्तविकता यह है कि आर्थिक कमज़ोरी से निःसहाय स्त्री जीवन यापन के लिए कई घरों में घर एवं झूटन की साफ-सफाई में लगी रहती तो कहीं कपड़े की दुकान में, आफिस में कर्मचारी के रूप में तथा कई कारीगरों में मजदूर के रूप में नज़र आती है।

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला जी की 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में स्त्री की हक़ीकत जिस तरह दर्शाया गया है वह आज भी इस समाज में द्रष्टव्य है। ठीक इसी तरह मन्नू भंडारी के 'अकेली' कहानी की सोमा बुआ आस-पड़ोस के लोगों से मिल जुलकर उनका काम करके, उन्हीं के दिये हुए पर अपना गुजारा करके जिंदा रहने की कोशिश करती है। अकेलेपन की यंत्रणा और चुंबन उसके भीतर

इतनी तीव्र है कि वह अपना सारा अपनापन खोकर भी उसे दूर करके को सदैव तैयार रहती है। गाँव के लोगों की प्रशंसा से भी उसका अकेलापन दूर होता है और उसमें जिंदा रहने के प्रति अहसास पैदा करता है। एक जगह बुआ कहती है-"भट्टी पर देखो तो अजब तमाशा-समोसे... गुलाब जामून एक पंगत में भी पूरे नहीं पड़े। मैंने उसी समय मैदा सानकर गुलाब जामून बनाए। दोनों बहुएँ और किशोरीलाल तो बिचारे इतना जस मान रहे थे कि क्या बताऊँ? कहने लगे-"अम्मा! तुम न होती तो आज भद्द उड़ जाती। अम्मा! तुमने लाजत रख ली।"[10]

### 3.7.2 अनुसरण

जीवन में नारी को किसी-न-किसी का अनुसरण करना पड़ रहा है। इसी संदर्भ में पहले माता-पिता का अनुसरण बाद में पति तथा बच्चों का अनुसरण किया जाता है। उनके लिए कोई वैयक्तिक स्वतंत्रता नहीं मिल रही है। लेकिन आजकल स्त्री में बदलाव आया है, वह खुद का रास्ता ढूँढ़ रही है। कभी यह रास्ता उसके लिए उपयुक्त हो तो कभी वैयक्तिक दृष्टि से संकट भी है। अगर उसकी दृष्टि में सामाजिक बुराइयों का आगमन नहीं होता है तो वह सफल रास्ते में चल सकती है। इस रास्ते के लिए भी कहीं-न-कहीं सुझाव दूसरों से लेना अनिवार्य है। अब्बूरी छायादेवी के 'तना मार्गम्' कहानी में वर्धनम्मा का रास्ता ठीक इसी प्रकार है कि-"चार रास्ते दिख रहे हैं। दो बेटों का। एक बेटी का। चौथा एकल मार्ग। बच्चे कह रहे हैं कि "तुम अकेली जी नहीं सकती। सिर्फ ब[illegible] ही नहीं, सब जान पहचान वाले भी यही कह रहे हैं। इतने दिनों तक पति आगे

---

[10] मन्नू भंडारी : श्रेष्ठ कहानियाँ-पृ.53

रहा तो वह उनका पीछा करी। अब पति अदृश्य हो गया। उसे सफर आगे बढ़ाना होगा।"[11]

### 3.7.3 जीत हार

जीत सबके लिए खुश खबरी है और इसी जीत के जीवन के कई चट्टानों को हासिल कर सकते हैं। प्रतियोगिता के संदर्भ में जीत और हार का होना साधारण तथा उपयुक्त है। लेकिन वैयक्तिक विचार एवं शर्त की दृष्टि से हार एक तरह से दर्दनाक संदर्भ है। इससे व्यक्ति की मानसिक कुंठा कमज़ोर हो जाती है। लेकिन कई संदर्भ ऐसे मिलते हैं जिसमें हार से गंभीर दृष्टि रखकर जीत को हासिल करते हैं, यह व्यक्ति के अंतर्गन में एक तरह से सकारात्मक दृष्टि को उत्पन्न करती है। मन्नू भंडारी की 'जीती बाजी का हार' कहानी की नायिका मुरला ने अविवाहित रहने का निर्णय लिया और उसके व्यक्तित्व का स्वतंत्र विकास भी हुआ। पर वह अंततः जिंदगी की बाजी जीतकर भी हार जाती है। वह संदर्भ इस प्रकार है-"मुरला, आशा की छोटी बेटी को गोद में लेकर कहती है 'तो अपनी यह बिटिया मुझे दे दे'।"[12] प्रसंगवत मृदुला गर्ग का मंतव्य देखा जा सकता है-"मातृत्व के अनेक आयाम ही नहीं, हर आयाम अनेक पूर्वाग्रहों से जुड़ा हुआ है। ज्यादातर पूर्वाग्रह मातृत्व को महिमा मंडित करते हैं। ... मातृत्व को स्त्रीवादी लोग, स्त्री के पाँव की बेड़ी बतलाया और एकदम विपरीत पूर्वाग्रह को जन्म दिया।"[13]

---

[11] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम-पृ.217

[12] मन्नू भंडारी, मैं हार गई-पृ.43

[13] हंस, फरवरी 2000-पृ.168

### 3.7.4 समझौता

आपस में दोनों वैमनस्य का एक होना समझौता है। यह समझौता मुख्य रूप से अपने आप से उत्पन्न होती है तो कहीं वार्तालाप से तय होती है। मुख्य रूप से पारिवारिक बंधनों में यह सिलसिला झकझोरता है। मन्नू भंडारी के 'नकली हीरे' कहानी के मिसेज सरन और इंदु समाज के दो वर्गों को प्रतिबिंबित करते हैं। एक उच्च संभ्रांत वर्ग की तो दूसरी मध्यवर्ग की। दोनों का अपना-अपना दायरा है। जीवन के प्रति उनके अपने दृष्टिकोण हैं और दोनों इसी में संतुष्ट हैं। दोनों ने कुछ खोया है, कुछ पाया है साथ ही जीवन से समझौता कर लिया। सरन पति के प्यार के बिना उच्च वर्ग की सामाजिक पोजिशन से संतुष्ट है तो इंदु और उसके पति की अपनी दुनिया है। उसका अलंकार पति का एक निष्ट प्रेम है। रोटी और कपड़े का प्रबंध उसका पति कर लेता है। इंदु अपने जीवन से संतुष्ट है, उसे बहन मिसेज सरन के ऐश्वर्य से कोई ईर्ष्या नहीं। इस तरह इंदु आधुनिक नारी होते हुए भी सुख और दुःख से समझौता करके एक परंपरागत और विवेकशील नारी के रूप में सामने आती है।

### 3.7.5 सफलता

किसी कार्य में सफल होने के लिए दृढ़ निश्चय, परिश्रम तथा सहायता का हाथ होता है, सहायता से किसी कार्य की सफलता होने पर सहायक की परवाह नहीं करना चाहिए। उसके बदले में कभी खुद से जितना हो सके उतनी सहायता करने के लिए तैयार होना मनुष्यता का धर्म है। अब्बूरी छायादेवी मुख्य रूप से 'आयना कीर्तिवेनु का' कहीन से यह बताने की चेष्टा की कि हर पुरुष की सफलता के पीछे प्रत्यक्ष/परोक्ष रूप से एक नारी जरूर रहती है। चाहे वह माता हो, बहन हो, पत्नी हो। वेंकटरामय्या को पूरी सफलता के साथ स्वातंत्र्य संग्राम में भाग लेने की पूरी सहायता अपनी पत्नी सीतम्मा से मिली। लेकिन जब

पत्रकार उनके साक्षात्कार लेने के लिए घर आते हैं तो उनकी सफलता के पीछे पत्नी की सहयोगिता को प्रस्तावित करना तो बहुत दूर की बात है, कम-से-कम पत्रकार के सामने सीतम्मा (पत्नी) का नाम तक नहीं लेता।

### 3.7.6 भ्रमण

स्त्री विवाह के उपरांत सीमारेखा तक उपग्रह की भांति भ्रमण करती है, इसका कोई स्वयं शक्ति व प्रकाश नहीं होता है। स्त्री के चेहरे पर प्रकाश, दिशा तथा शक्ति पति से ही तय है, वरना वह निर्जीव है। अब्बूरी छायादेवी के 'उपग्रह' कहानी की नायिका शादी के बाद पति को ही सर्वस्व समझ कर अपने विचारों को महत्व दिये बिना, मानसिक रूप से पति पर आधारित होकर उसके चारों ओर उपग्रह जैसा फिरती है। इस कहानी मं पत्नी की हर दिन की रोटीन को कहानीकार एक ही वाक्य में इस प्रकार बताते हैं-"कल फिर से यही कार्यक्रम- सुबह दूधवाला घंटी बजाने से शुरू हुई काम, रात वे (पति) उस तरफ फिरकर सोने से आखिर।"[14]

इस तरह का जीवन बितानेवाली स्त्री के लिए छायादेवी द्वारा लिखी गयी कहानी का नाम है 'उपग्रह'।

### 3.7.7 सेन्स आफ बोरडम

अनादिकाल से स्त्री का जीवन गृहस्थ जीवन बनकर रहा। यह स्थिति आज भी विद्यमान है। फिर भी इस गृहस्थ जीवन में स्त्री की सेन्स आफ बोरडम समस्या पीछा कर रही है जिसमें पति आधुनिक जीवन में रोजी-रोटी से व्यस्त होकर पत्नी की इच्छाओं के लिए समय देने में असफल है। वास्तव में पुरुष इस सेन्स आफ बोरडम को समस्या के रूप में स्वीकारता नहीं। इस सेन्स आफ बोरडम समस्या को हमारे सामने लाने की कोशिश में अब्बूरी छायादेवी ने

---

[14] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.56

‘उपग्रह’ कहानी लिखी। इस कहानी की नायिका के लिए सेन्स आफ बोरडम एक नित्य समस्या है। पति उनकी यह स्थिति, उससे होनेवाली छोटी-मोटी इच्छाओं को मालूमात कराता है। पति की संगति चाहनेवाली स्त्री गृहस्थी में उस विषय को अनेक प्रकार से अभिव्यक्त करने की चेष्टा करती है। मगर पुरुष इनसेन्सिटिव है इस तरह के विषयों के लिए।

### 3.7.8 निद्राहीनता

जीवन के लिए नींद और होश दोनों अनिवार्य हैं। हमेशा नींद, हमेशा होश, कम नींद, कम होश दोनों स्वस्थ के लिए हानिकारक हैं। नारी के जीवन में नींद की कमी मायके से लेकर ससुराल तक पीछा नहीं छोड़ रही है। घर में बचपन में शिक्षा के नाम पर सुबह-सुबह नींद से जगाया जाता था। ठीक इस हालत में गुजरती है अब्बूरी छायादेवी की ‘सुकांत’ कहानी की नायिका। वह एक संदर्भ में इस प्रकार कहती है-"मुर्गी जैसा नींद मुझे नहीं चाहिए। आदमी का नींद चाहिए। उस अनुभव को पैदाइषी से लेकर नहीं जान पाई। जी! मत घबराइएगा! बस सो रही हूँ। ऐसा मत सोचिएगा कि मैं आत्महत्या कर रही हूँ। सिर्फ नींद के लिए सो रही हूँ।"[15] उसके जीवन में आराम का अभाव है, आखिर नींद की गोलियाँ लिये बिना आँखों भर नींद आना असंभव है। इस ऊपरी वर्ग वृद्ध ब्राह्मण स्त्री का जीवन पर्यंत किसी-न-किसी काम में तैरे, डूबे जैसा रहता है।

## 3.8 पारिवारिक समस्या

समाज व्यक्तियों का समूह है। फिर भी वह अनेक परिवारों में बंटा हुआ रहता है। हर एक परिवार की अपनी-अपनी गाथाएँ होती हैं, जिसमें सुख-दुःखों का बोलबाला होता है। परिवार में मुख्यतः अधिकार की समस्या प्रबल होती है, साथ ही स्त्री और पुरुष के बीच भेदभाव तथा छोटे-बड़े इत्यादि की

---

[15] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.62

समस्याएँ झकझोर दिखाई देती हैं। कहीं-कहीं आर्थिक समस्याएँ परिवार की सबसे बड़ी समस्या है तो कहीं मानसिक तनाव उससे भी बढ़कर समस्या बन जाती है।

### 3.8.1 आज़ादी

आज़ादी का नाम सुनते ही पंची के पंखों से आसमान में घूमनेवाला चित्र नज़र आता है। योद्धा देश को स्वतंत्रता दिलाने में वैयक्तिक एवं सामूहिक रूप से जंग करते हैं। इन योद्धाओं में से कई ऐसे मूर्ख योद्धा नज़र आते हैं, जो देश के अतिरिक्त आज़ादी पर बकवास करते हैं। अब्बूरी छायादेवी 'आयना कीर्ति वेनुका' में 'सीतम्मा' के माध्यम से स्त्रियों की आज़ादी के बारे में बताती है। सीतम्मा के पति वेंकटरमणय्या स्वतंत्र योद्धा होने पर भी हमेशा पत्नी पर अधिकार जमाता रहता है। उसे घरवाली की आज़ादी का कम-से-कम सोच भी नहीं। सीतम्मा एक संदर्भ में इस प्रकार मन-ही-मन सोचती है-"क्यों, आज़ादी मिलकर पचार साल होने से उत्सव मना रहे हैं। किसे मिली है वह आज़ादी? मुझे तो नहीं मिली है।"[16]

### 3.8.2 त्रासदी

ट्राजडी का हिंदी पर्याय शब्द त्रासदी है जिसमें मानसिक घटनाओं का दर्दनाक दस्तावेज़ दर्शित है। इसमें दुखांत भावनाओं का समावेश होता है। अब्बूरी छायादेवी अपनी 'प्रश्नार्थक' कहानी में शिवानी और उसकी माँ के माध्यम से, पारिवारिक त्रासदी को आत्मविश्वास के साथ सामना करनेवाली एक आधुनिक मानसिकता को अत्यन्त सहज एवं यथार्थ परक ढंग से प्रस्तुत किया। उसकाएक संदर्भ इस प्रकार है-"हम अपनी जिंदगी जी रहे हैं, अपने भविष्य को हमने ही बनायी है, सोच कर सुखी रहने नहीं देती यह समाज। हमें वर्तमान और

[16] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.228

भविष्य है, अतीत नहीं, कहकर हम दोनों समझेंगे तो नहीं चलेगा। यह समाज हमें अतीत की याद दिलाती है। अतीत को खोद के निकालती है। बिना किसी गलती पर दोष का धब्बा लगा देता है यह समाज।"[17] आज़ादी प्राप्त होकर 60 साल होने पर भी स्त्री को तो आज़ादी नहीं मिली और इस पितृसत्तात्मक समाज उनके जीवन पर हमेशा प्रश्न चिह्न बनाती जा रही है।

### 3.8.3 निःसहाय

कुछ परिस्थितियों में निःसहायता जब अनुभव होता है तो मन में निराशा एवं उदास की परछाइयाँ छा जाती है। ऐसी स्थितियों में चेतना की कई प्रेरणात्मक सुझावों का आगमन होता है। लेकिन यह सुझाव कुछ प्रतिशत तक ही सफल होते हैं। नारी का संदर्भ अगर निःसहायता में लेने पर नारी की स्थिति ऐसी हो गयी है कि वह अपने आप की रक्षा में सफल होती है तथा दूसरों की सहायता में निरूपयोग बन कर रह जाती है। अब्बूरी छायादेवी के 'बोन्यास बतुकु' कहानी में परिवार में नारी की निःसहाय स्थिति का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। बोनसाय पौधा को लेखिका नारी का प्रतीक माना है। सुप्रसिद्ध फ्रेंच स्त्रीवादी लेखिका 'सिमुन द बेवा' का कथन है-'स्त्रियाँ स्त्रियों के जैसे पैदा नहीं होती है वे बनायी जाती हैं।' आजकल भी स्त्री की स्थिति वैसे ही बनी रही है। जैसे स्त्री हो तो ऐसे चलना है, सिर ऊँचा नहीं करना, वाद-प्रतिवाद नहीं करना, पुरुष को प्रश्नित/सवाल नहीं करना, पुरुष चाहे जो भी कहे कटपुतली की तरह सिर हिलाना बस। ये सारे लक्षण जिस स्त्री में पाये जाते हैं, केवल उसी स्त्री को हमारा समाज गुण संपन्न स्त्री का दर्जा दे रही है।

---

[17] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.231

### 3.8.4 पिता

लालित्य एवं प्रेम का सच्चा नाम माता-पिता है। पिता संपूर्ण परिवार के मार्गदर्शक है। बच्चों के जन्म से लेकर यौवनावस्था तक उनका रहन-सहन, खान-पान, शिक्षा-दीक्षा तथा शादी-शुदा इत्यादि के दायित्वों को अपने कंधे पर ढोते हुए रक्षा करता है। लेकिन आजकल की आधुनिक मानसिकता में बेटी के प्रति पिता की दृष्टि एक निरूपयोगी एवं भोज प्रतीत होता है। अब्बूरी छायादेवी अपनी जीवन में घटी हुई घटना को ही 'स्पर्शा' कहानी के रूप में प्रस्तुत किया। जिंदगी भर परिवार में अपना आधिपत्य चलाये हुए पिता, बेटे को देखकर गर्व किये हुए पिता, बेटे के अकाल मृत्यु के बाद, बुढ़ापे में बेटी का सहारा चाहता है। तभी बेटी के प्रति इतने सालों से अपने अंतर्मन में छिपी हुई प्यार को पहली बार व्यक्त करता है तो बेटी इस प्रकार महसूस करने लगती है कि-"पापा समीप होकर दोस्ती से बैठने की बात तो बाल्यस्मृति से ही एक सपना है। अब मेरे हाथ को अपने हाथों में लेकर आत्मीयता से थाम लेने पर बचपन के जो मेरे अंतर्मन पाई हुई तड़प आँखों के सामने चित्रित होकर आँखें गीले हो गए, क्या यह सब उन्हें कभी महसूस हुआ होगा।"[18]

### 3.8.5 पति-पूजा

हिंदू एवं मुस्लिम समाज में पति को पूजने की परंपरा आज भी है। स्त्री पति को आज भी भगवान के बाद का दर्ज़ा दे रही है। वह शराबी, जुआखोर एवं निकम्मा होने पर भी स्त्री खुद मेहनत कर पति के प्रेम को जीतना चाहती है। अधिकतर स्त्री के हृदय में संवेदनशीलता का गुण अधिक होता है। लेकिन यह भी सत्य है कि उत्तराधुनिकता की समाज तथा पाश्चात्यवाद ने स्त्री को स्वतंत्र

---

[18] अब्बूरी छायादेवी, तना मार्गम्-पृ.122

व मुक्ति के भ्रम पर गलत पैमाने की राह में ले जा रही है, जिससे चलकर स्त्री को समाज में काकेई अस्तित्व नहीं मिल रहा है। स्त्री को माता-पिता, भाई-बहन अथवा पति के अतिरिक्त उसकी अस्तित्व कोरा महसूस होता है। मन्नू भंडारी के 'नशा' कहानी में आनंदी के पति शंकर नशाखोर है। □ब पीने के लिए पैसे नहीं मिलता है तब गुस्से से आनंदी को मारता है। इनके इकलौता बेटा बचपन में ही घर से भाग जाता है। शराबी पति शंकर के सभी दुर्गणों के बावजूद अंत तक चाहती है। वृद्धावस्था में कमरतोड़ मेहनत करके पैसे जुटा कर पति को पैसे देने से, पति के प्रति अपनी अपनी आराधना को प्रकट करती है।

### 3.8.6 स्नेहहीन व्यवहार

हृदय को दृढ़ जंजीरों से बांधनेवाला एकमात्र सच्चा दिल पसंद है दोस्ती व स्नेह। जिसके नीचे कई संदर्भ ऐसे भी देखने को मिलते हैं जिसमें अपने आत्मीय स्नेहमय स्पर्श से मृत्यु को भी जीत सकते हैं। मन्नू भंडारी के 'अकेली' कहीन में सोमा बुआ के पति का स्नेहहीन व्यवहार का अंकुश उनके रोजमर्रा के जीवन की अबाधगति से बहती स्वच्छंद धारा को कुंठित कर देता है। सोमा पास-पड़ोस के लोगों से मिल-जुलकर उनका काम करके उन्हीं के दिये हुए पर अपना गुजारा करके जिंदा रहने की कोशिश करती है। पति के स्नेहहीन व्यवहार को व्यक्त करते हुए बुआ इस प्रकार कहती है-"मन तो दुखता ही है कि एक महीने को आते है तो भी कभी मीठे बोल नहीं बोलते। मेरा आना-जाना इन्हें सुहाता नहीं, सो तू ही बता, राधा ये तो साल में ग्यारह महीने हरिद्वार में रहते हैं। इन्हें तो नाते-रिश्तेवालों से कुछ लेना-देना नहीं, पर मुझे तो सबसे निभाना पड़ता है। मैं भी सबसे तोड़-ताड़कर बैठ जाऊ तो कैसे चले। मैं इनसे कहती हूँ कि जब पतला पकड़ा है तो अंत समय में भी साथ ही रखो, सो तो इन से होता नहीं। सारा धरम-करम ये ही लूटेंगे, सारा जस ये ही बटोरेंगे और मैं अकेली

पड़ी-पड़ी यहाँ इनके नाम को रोया करूँ। उस पर से कहीं आऊँ-जाऊँ वह भी इनसे बर्दाश्त नहीं होता...।"[19] और बुआ फूट-फूट कर रो पड़ी।

### 3.8.7 माँ का वात्सल्य

बच्चों के प्रति माँ का लालित्य तथा उत्तरदायित्व एक हद तक ही संकुचित रहना है, नहीं तो वह बच्चों के लिए हानिकारक व बाधाजनक होगा। बच्चों की मानसिकता कोमलता से भरा हुआ रहता है, उसे जितना हृदय के मुलायम बातों से प्रदर्शित करेंगे उतना ही सफल हो सकते हैं। मन्नू भंडारी के 'सयानी बुआ' कहानी में सयानी बुआ का स्वभाव विशेष ही कहानी का कथ्य है। बुआ व्यवस्था के नाम पर सभी सदस्यों को जेल के कैदी के समान रहने को मज़बूर कर दी। इसी आतंक से अन्नू बीमार पड़ी तो पिता के साथ पहाड़ भेजा गया। लगातार तीन दिन पत्र नहीं आया तो अन्नू के प्रति वर्षों से जमा हुआ ममत्व पिघल पड़ता है और अपने पूर्ण आवेग के साथ बह जाता है। घर संभालने में नारी चाहे कितने कटु व्यवस्थित क्यों न हो? फिर भी बच्चों के प्रति उनके ममत्व में कोई कमी नहीं। स्वभावतः कैसे भी हो, माँ तो माँ ही रहेगी। इससे मालूमात होता है कि वात्सल्य नारी का स्थायी भाव है।

भाई-बहन

मानसिक रूप से भाई और बहन बाल्यावस्था में अत्यन्त प्रेम बनाये रखते हैं, लेकिन यह जो प्रेम आगे चलकर द्वेष तथा अहम में परिवर्तित हो रहा है। इसका मूल कारण संपत्ति तथा पैसों की लालसा है। जिसमें भाई की भूमिका गैरतलब है। 'सज़ा' कहानी में मन्नू भंडारी ने भाई-बहन के बीच प्यार की महोन्नता को अत्यन्त सरल एवं सहज ढंग से प्रस्तुत किया है। चाहे वे उम्र में छोटे क्यों न हों फिर भी बहन होने के नाते आशा अपने भाई मन्नू के प्रति प्यार

---

[19] मन्नू भंडारी:श्रेष्ठ कहानियाँ-पृ.55

और दायित्व निभाने में बच्ची होकर भी बड़ी जैसी लगती है। आशा चाची के वहाँ पढ़ने के लिए नहीं जा रही है सिर्फ इसलिए जा रही है कि अपना छोटा भाई मन्नू को तसल्ली दिलाने के लिए और रोते समय अपनी गोद में सुलाने के लिए। वह सच्ची में अपनी माँ की तरह बड़ी हो गई है।

### 3.8.8 वृद्धावस्था की लापरवाही

वृद्धावस्था में माता व पिता का कोई ख्याल रखनेवाला नहीं होता है। वृद्धावस्था में इनको एक अंचल की निरुपयोगी वस्तु मान बैठते हैं। वृद्ध अथवा वयस्क की बातों को महत्व देने के लिए कोई तैयार नहीं रहता, उनसे कही हुई बात हमेशा के एि निरुपयोगी मान बैठते हैं। अब्बूरी छायादेवी की ‘उडरोज़’ कहानी में लेखिका ‘उडरोज़’ को वृद्धावस्था का तथा ताज़ा गुलाब यौवन का प्रतीक मानती हैं।

## 3.9 सामाजिक विषमता

पूर्वकालीन समाज में नैतिक मूल्यों का आदर होता था। लेकिन आज का उत्तराधुनिक समाज नैतिक मूल्यों की बात ही नहीं करता। आजकल यह स्वयं दमन, स्वार्थ, भ्रष्ट, बेइनसाफी तथा अनैतिकता का केंद्र बन गया है। सामाजिक विषमताओं में से राजनैतिक विषमता का ज्यादा वर्चस्व है। प्रत्येक कार्य में राजनीति का हाथ जरूर है। जिसके नाते सामान्य जनता नष्ट की खाई में जा रही है।

### 3.9.1 अंधविश्वास

समाज पड़ोस की सहायता के बदले में अडंगा उत्पन्न करती है। अविश्वसनीय बातों पर झूठे-सच्चे कार्यों पर विश्वास रखकर अंधविश्वास को फैलाते हुए दूसरों पर इस अंधविश्वास को थोपना चाहते हैं। जब वे अगर सुनने के लिए तैयार नहीं होते तो उन पर कुछ-न-कुछ आरोप लगाकर उंगली दिखाते हैं। मन्नू भंडारी की 'रानी माँ का चबूतरा' कहानी की 'गुलाबी' अपने शराबी पति को झाडू मारकर घर से बाहर निकालकर प्राचीन परंपराओं को चुनौती देती है। काकी रानी माँ के चबूतरे के महत्व को धन्नी से इस प्रकार कहती है-"कोई दस साल पहले की बात होगी, हमारे नगर सेठ के बेटे पर शीतला माई का कोप हुआ। पानी की तरह पैसा बहाया, बैद-हकीमों का ताँता लग गया, पर सब हार गए और शीतला माई बच्चे पर ऐसी जमकर बैठी कि न उसे मरने दें न जीने दें।... भाग से एक साधू द्वार पर आया। वह कोई ऐसा-वैसा साधू भी नहीं, शीतला माई का भेजा हुआ साधू ही था। बोल, बेटी तेरा बच्चा मौत के मुँह में है, पर तेरे प्रताप से ही बचेगा। सात दिन तू अन्न-जल का त्याग कर दे, तेरा बच्चा उठ खड़ा होगा। ... सात दिन बाद बच्चा तो उठ खड़ा हुआ पर रानी माँ जाती रहीं। सारा गाँव इकट्ठा हुआ उस देवी के दर्शन करने को, अरथी ऐसे उठी कि राजा-महाराजाओं की भी क्या उठेगी। ... सेठजी ने अपने बगीचे में रानी माँ की याद में एक चबूतरा बनवाया। हर पूरनमासी को नगर की औरतें वहाँ दिया जलाने जाती हैं, अपने बच्चों के लिए मनौती मांगती हैं।"[20] तब से यह चबूतरा गाँववालों के मन में बहुत प्रसिद्ध बन गया है और दूसरी ओर इस चबूतरे के कारण लोगों में अंधविश्वास की भावना भर गई है। गुलाबी इस प्रकार के अंधविश्वासों के साथ जीवन चलानेवाली स्त्री नहीं है।

---

[20] मन्नू भंडारी:श्रेष्ठ कहानियाँ-पृ.29-30

### 3.9.2 आधुनिक समाज

आधुनिक समाज में उन्नति के लिए वैवाहिक बंधन एक समस्या मानने की धारणा आज भी कई लोगों के दिल में मचलता है। लक्ष्य हर एक को रहते हैं, मगर साथ ही सामाजिक बंधनों का मेल होता है, जिसमें विवाह भी एक है। मगर ऐसी स्थिति नहीं होती, कुछ लोग लक्ष्य व मंजिल पाने के लिए विवाह एक अवरोध मानते हैं। इसी बात को मानकर चलती है मन्नू भंडारी की ‘□ीती बा□ी का हार’ कहानी की नायिका ‘मुरला’। विवाह से  पढ़ाई को ज्यादा महत्व देकर मुरला पी-एच.डी. करके प्रोफेसर बन जाती है। आधुनिक समाज के साथ वह भी आगे बढ़ना चाहती है। मगर धीरे-धीरे वह अकेलापन महसूस करती है। मुरला अविवाहित रहने की चुनौती अपनी दोस्त आशा को देकर जीत जाती है, फिर भी अंत में आशा की बिटिया को माँग कर जीत कर भी हार जाती है। नारी में वात्सल्य की लालसा रहती है। वह इस कहानी का कथ्य है। इस कहानी के माध्यम से लेखिका एक अविवाहित नारी अंदर की मानसिक कुंठा को छिपाकर जीवन यापन करने की चेष्टा को स्पष्ट किया है।

### 3.9.3 मानसिक कुंठा

मनुष्य को जो कुछ भी दर्दनाक विषय मन में आ जाता है तो वह मानसिक रूप से कमजोर पड़ जाता है। समाज मानव के प्रति मानवीयता का अनादर करने से ही छोटी समस्याएँ भी उनके पक्ष मे ंनहीं ठहरती हैं। समाज में मुख्य रूप से आर्थिक एवं मानसिक समस्याएँ हैं। लेकिन इन समस्याओं से भी बढ़कर राजनीतिक समस्या ने अपना दर्जा आगे कर लिया है। पहले राजनीति की दृष्टि सिर्फ राज खोलने से ही मतलब है, लेकिन मसला अलग है। राजनीति नाम लेते ही दमन, भ्रष्टाचार, अनैतिकता आदि के अड्डे की स्मरण आती है।

आधुनिक समाज में बढ़ती हुई मानसिक कुंठाओं के बारे में मन्नू भंडारी ने 'एक कमज़ोर लड़की की कहानी' में 'रूप' के द्वारा चित्रित किया है। सौतेली माँ के कठोर नियम के साथ उसको जीवन निर्वाह करना पड़ा। मौन होकर उसे पढ़ाई से लेकर अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। रूप वैचारिक दृष्टि से परिस्थितियों से विद्रोह करती है किंतु यथार्थ में कार्यान्वयन के समय कमज़ोर पड़ती है। प्रकट विद्रोह में असमर्थ सिद्ध होती है। लोग अच्छा कहें, इस भावना से रूप अपनी इच्छाओं का होम करने को प्रवृत्त होती है। सामाजिक तिरस्कार सह न पाना उसकी कमजोरी है। लादे हुए निर्णयों के कारण मानसिक कमजोरी और स्वनिर्णय लेने की अक्षमता का प्रतीक 'रूप' है, जिसने अनेक बार निर्णय लेने का प्रयास किया, पर जो हर बार हारती गई। वह प्रेम जैसे अंतर्मन के व्यवहार में भी आत्मनिर्भर नहीं बन पायी है।

### 3.9.4 अस्तित्व

समाज में वैयक्तिक अस्तित्व के साथ परिवार को भी महत्व देना मानव मूल्यों को जिंदा रखने के समान है। उदाहरण के लिए एक साहित्यकार के अस्तित्व को ही लिया जा सकता है। साहित्यकार अपनी साहित्यिक रचनाओं से अपना एक अस्तित्व पाता है अगर वह अकाल मृत्यु का शिकार बन जाता है तो सिर्फ उस लेखक के प्रति ही उनकी उदास एवं खोये हुए भाव जागृत होते हैं। लेकिन उनकी पत्नी व परिवार के सदस्यों की कोई चिंता ही नहीं करते हैं। यहाँ समाज का दृष्टिकोण आज भी फायदे मंद की चेष्टा की भांति है। इसी कथ्य को अब्बूरी छायादेवी 'सति' नामक कहानी में प्रस्तुत करती हैं। पति तिरुमल के गुजर जाने के बाद, सब के सब पाठक गण जानते हैं कि 'सति' में आधा भाग अर्थात् सत्यवति अभी भी जिंदा है। सत्यवति मशहूर कहानीकार होने पर भी पुरुषाधिक्य समाज उसे, पति तिरुमलराव के बगैर अलग सी पहचान नहीं देता। इसी वजह से सत्यवती को साहिती सति बना दिया गया।

### 3.9.5 स्त्री शिक्षा

शिक्षाज्ञान भंडार के प्याले को ले आती है। इस प्याले में समाज का संपूर्ण समाचार निहित है। पुरुषाधिक्य समाज स्त्री को इस प्याले से दूर रखता है, जिससे उसके अस्तित्व में कोई कमी न आ पाये। शिक्षा से दूर स्त्री की मानसिकता संकुचित बनकर रहती है, समाज के आधुनिक मान्यताओं से उसे भोलेपन का चेहरा ही देखना पड़ता है। अंत में स्त्री भी ऐसी बन जाती है कि वह खुद की रक्षा कभी नहीं कर सकती और साथ ही साथ दूसरों की रक्षा भी। अब्बूरी छायादेवी के 'बोनसाय जीवन' कहानी में लेखिका दो बहनों के माध्यम से शिक्षित और अशिक्षित स्त्रियों के जीवन में फरक को यथार्थ ढंग से प्रस्तुत करती हैं। पिता लड़कियों के लिए शिक्षा अनावश्यक समझने के कारण बड़ी बेटी को 5 वीं कक्षा तक पढ़ा कर, कम उम्र में ही शादी कर देने से खेती का काम तथा बच्चों को पालने तक सीमित हो गई। छोटी बहन खूब पढ़कर नौकरी करती है। इस कहानी में बोनसाय पौधा नारी के जीवन का प्रतीक है। पुरुष पर निर्भर करके, उनकी छाया में जीवन बिताने से स्त्री जीवन, बोनसाय के समान, हमेशा कटवा कर बढ़ोत्तरी न होगी।

### 3.9.6 बुराई

बुरा कर्म समाज के लिए बुरा है। लेकिन आज के समाज के अधिकतर बुरे कार्य के प्रति समाज अनदेखी व्यवहार कर रहा है। कोई इसे रोकने का साहस नहीं करता। लालच अथवा भय ही इसको न रोकने का मूल कारण है। समाज में अच्छे लोगों का काम वही होता है जो बुरे के नाम से ही दूर रहते हैं। अब्बूरी छायादेवी के 'प्रश्नार्थक' कहानी में पति परायी स्त्री के मोह में पत्नी और बेटी को छोड़कर चला जाता है तो पत्नी मेहनत करके बेटी को पढ़ाती है लेकिन पति न होने के कारण समाज उनके सामने प्रश्न खड़ा करता है। उनके

मामले में समाज हमेशा दखल अंदाज करता है। इस तरह पूछे बिना दूसरों के निजी मामले में दखल अंदाज करना सबसे बड़ी सामाजिक बुराई है।

### 3.9.7 स्त्री की पहचान

स्त्री की पहचान आज भी प्रश्नार्थक है। कम-से-कम अधिकांश में न भी मिले कम-से-कम अपने स्वयं कृषि की पहचान तो मिलनी चाहिए। स्त्री की मदद इस समाज में कई तरह से पहुँची है, ऐसे संवेदनशील हृदय मूर्तियों को पहचान न देना आज भी शर्मनाक बात है। अनादिकाल से चली आ रही स्त्री के प्रति पुरुष और समाज की दृष्टि का यथार्थ चित्रण 'सति' कहानी में अब्बूरी छायादेवी ने प्रस्तुत किया। पति-पत्नी सत्यवति-तिरुमलराव दोनों मिलकर कहानी रचना करने पर भी पति के आदिपत्य के कारण सत्यवति को कोई अलग पहचान नहीं मिल पायी।

* * *

# अध्याय-IV

# उपसंहार

नारी जीवन के मूक क्षणों को वाणी देनेवाले ज्वलंत स्त्रीवादी कहानीकारों में मन्नू भंडारी अग्रगण्य हैं। लेकिन अब्बूरी छायादेवी मन्नू जी के जैसे स्त्रीवादी होते हुए, सामान्य मानवतावाद की ओर भी दृष्टि रखनेवाली लेखिका हैं। मन्नू भंडारी की कहानियों में स्त्री विमर्श के मुद्दे पर ही ज्यादा जिक्र किया जा रहा है। अब्बूरी छायादेवी जी से साक्षात्कार लेते समय यह मालूम हुआ कि वे स्त्रीवादी लेखिका होने के नाते पूर्ण रूप से पुरुष के विपरीत तो नहीं हैं। स्त्री और पुरुष की तुलना में वैयक्तिक तौर पर बहुत सी स्त्रियाँ धोखा खाते हुए सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति से बहुत बिगड़ी हुई हैं। समाज में मुख्य रूप से निम्न वर्ग, मध्य वर्ग के लोग हैं। आजकल तो मध्य वर्ग के लोग निम्न वर्ग में आने लगे हैं। इसी वजह से स्त्री होने के नाते बहुत मेहनत करना पड़ रहा है। अशिक्षित होने के कारण या कम पढ़ी-लिखी होने के कारण स्त्री को अच्छी नौकरी मिलना कठिन है। फिर भी वह बच्चों का पालन-पोषण तथा उनकी पढ़ाई के लिए पैसा जुटाना और भी कठिन है। समकालीन स्त्री की समस्याओं में से गुलामी एक है।

बचपन से ही स्त्री हकदार का गुलाम बनती आ रही है। बचपन में पापा का कहना मानना, शादी के बाद पति का, बाद में बच्चों का, बस यही स्त्री की दिनचर्या हो गयी है। स्त्री के विचारों को, व्यक्तित्व को महत्व देना अत्यन्त आवश्यक है, तभी वह बिना डर के अपने विचारों को खुलकर व्यक्त कर सकती है। अगर ऐसा नहीं होता तो प्राण होते हुए भी स्त्री का जीवन सिर हिलाने

वाली गुडिया जैसा बन जाता है। ठीक सीतम्मा की हालत भी ऐसी ही है जो कहानी की पात्र है।

मानव संवेदनशील प्राणी है। उनकी अपनी भावनाएँ और संवेदनाएँ होती हैं। साथ ही वह अपने विचारों को व्यक्त किये बिना मूक बन कर नहीं रह सकता। लेकिन ये सब अकेले में रहकर नहीं कर पाते और अकेले रहकर बता भी नहीं सकते, क्योंकि मानव सामाजिक प्राणी है। चाहे पुरुष हो या स्त्री हो इस समाज में अकेले जिया नहीं जा सकता और वह अकेले रहने के लिए कटिबद्ध होने पर भी यह समाज उसे जीने नहीं देता। नारी चाहे जितनी आधुनिक क्यों न हो, हर एक अपने पति के साथ वैवाहिक जीवन बिताना चाहती है और यही यथार्थ है। इसलिए समाज में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है। इसलिए बचपन में माता-पिता, यौवन में पति, बुढ़ापे में बच्चों का सहारा मायने रखता है। नारी चाहे जितनी आधुनिक हो फिर भी बेसहारा जीकर तो अकेलापन जरूर महसूस करती है। ठीक इसी स्थिति में है मुरला का मन भी।

धन ही जिंदगी नहीं, जीने के लिए धन की जरूरत तो है, लेकिन उससे पहले अच्छे व्यक्तित्व का होना भी बहुत जरूरी है। यही उक्ति पूरे प्राणी जगत में मानव को उच्च स्थान प्राप्त कराती है। जब हम पैसों के लालच में पड़कर अपने व्यक्तित्व को खो बैठते हैं तब अपनी और साथ ही साथ परिवार वालों की याने अपनों की जिंदगी बरबाद कर लेते हैं। सिर्फ उस एक आदमी की ही नहीं, उस समूचे परिवार की बेइज्जती हो जाएगी और उनका जीना हराम हो जाएगा। मिसेज सरन इसी स्थिति में पड़कर तड़पती है।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्र की उन्नति के कारण आदमी में मृत्यु को रोकने की और आयु को खरीदने की चाहत बढ़ती जा रही है। आज ज्यादातर डॉक्टर लोग रक्षक के बदले भक्षक बन गये हैं। डाक्टर्स पाँच नक्षत्र वाले अस्पताल का निर्माण कर हाइटेक शोषण कर रहे हैं। इसी शाषण से माधवराव बलि हो जाता

है। इसका अच्छा उदाहरण तेलुगु फिल्म शंकर दादा एम.बी.बी.एस. को लिया जा सकता है।

स्त्री के लिए शिक्षा आजकल अनिवार्य सी बन गयी है। आजकल शिक्षा द्वारा स्त्री परिवार में तथा समाज में खुद की पहचान बनाने की चेष्टा कर रही है। शिक्षित स्त्री के आर्थिक तौर पर और विचार के तौर स्वतंत्र बनने की संभावनाएँ ज्यादा हैं। स्त्री शिक्षा सिर्फ खुद के लिए ही उपयोगी न होकर समूचे परिवार के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो रही है। क्योंकि हमारे देश में पितृस्वाम्य व्यवस्था होने पर भी परिवार में माँ का ही अपना विशिष्ट स्थान तथा पहचान है। विद्या के बिना जीवन निरीह बन जाता है। स्त्री-पुरुष के बीच जो अंतर है, उसे मिटाना मुश्किल बन रहा है। जन्मतः स्त्री-पुरुष के बीच भेदभाव न होने पर भी, स्त्री को स्त्री की तरह, पुरुष को पुरुष की तरह बचपन से ही, परिवार में तथा समाज में देखा जा रहा है। इसलिए स्त्री का जीवन 'बोनसाय' जैसा बनता जा रहा है।

गाँव में या शहर में, पढ़ी-लिखी हो या अनपढ़ हो नारी की हालत परिवार में एवं समाज में जैसे की तैसे ही है, कोई बदलाव नहीं आया। नारी तो संवेदनशीलता का प्रतीक है। साथ ही पति पूजन तो अनादिकाल से चली आ रही भारतीय परंपरा है। स्त्रियों के लिए सेन्स आफ बोरडम एक शाश्वत समस्या है। बहुत सारे पुरुषों को यह स्थिति, उससे होनेवाली छोटी-मोटी इच्छाएँ या कामनाएँ मालूम भी नहीं होंगी। पति की संगति की चाहत को पत्नी गृहस्थी में किसी-न-किसी रूप में व्यक्त करती है तथा पति से भी इस तरह का व्यवहार □हती है। मगर पुरुष संवेदनहीन है। इन सारे विषयों के लिए 'उपग्रह-1' कहीन उदाहरण रूप है।

मनोवैज्ञानिक तौर पर देखें तो स्त्रियाँ अपनी भावनाओं को अंतर्मन में छिपाये बिना, हमेशा व्यक्त करती रहती है। लेकिन पुरुष के मामले में तो यह बिलकुल अलग है। जो भी हमें सच्चे दिल से प्यार करता है, चाहे पति हो या प्रेमी वह अपनी भावनाओं को व्यक्त किये बिना अंतर्मन में छिपा लेता है। दिखाने का प्यार थोड़ी ही करता है। ज्यादातर औरत इस बात को समझे बिना वह सुकून से नहीं रहती और सामनेवाले (पति/प्रेमी) को सुकून से जीने नहीं देती। कुछ लोग तो पति को समझे बिना, गलत रास्ते पर गुजर कर, गलत फैसला कर, बाद में पछताने लगते हैं। पति या प्रेमी का प्यार तो कोई चीज़ नहीं, जैसे एक चीज़ पसंद नहीं आई तो उसे फेंककर दूसरी चीज़ को ले लिया जाय। प्यार को कभी भी चीज़ जैसा नहीं दिखाया जा सकता, क्योंकि प्यार तो एहसास होता है तथा रिश्ते विश्वास पर ही कायम रहते हैं। जब विश्वास टूटता है तो साथ ही जिंदगी भी टूट जाने की संभावनाएँ हैं। ठीक इसी झंझट में झूलने लगती है 'रानी'।

महानगर तथा गाँव के परिवेश में फरक ज्यादा है। यह फरक हमें रिश्तों के संदर्भ में, जीवन शैली के संदर्भ में प्रमुखरूप से दिखाई देता है। आधुनिक जीवन विधान तथा पाश्चात्य फेमी में भटकते हुए इंसान रिश्तों को निभाने में अपने फर्ज को भूलते जा रहे हैं। मानव एक सामाजिक प्राणी होने के नाते वह अकेला नहीं जी सकता, चाहने पर भी नहीं। इस संसार के पूरे जन जाति में मानव की अपनी एक अलग पहचान है। संवेदना, विवेकता, नैतिकता आदि के ज़रिए मानव का विशिष्ट स्थान है। जिसमें मानवता तथा नैतिकता की मात्रा देखने को ज्यादा मलती है। वही मानव कहलाने लायक होता है लेकिन आजकल मानव मानवता से हटकर राक्षसत्य की ओर बढ़ रहा है तो अब हम इन्हें मानव कहें या राक्षस? राजाराव तो मानव कहलाने के लायक नहीं। आजकल सच्चे इंसान को पहचानना या ढूँढ़ना बहुत मुश्किल है। सच्चाई का चश्मा लगाकर

अपना कालापन अंत में बाहर लाता है, कभी-कभी यह कालापन ऐसे ही गढ़ □ाता है।

हम सब अपने पैरों पर खड़े होने के बाद, बचपन में उंगली पकड़कर चलना सिखाई हुई माँ के बुढ़ापे में उपेक्षा कर रहे हैं। जिस मातृमूर्ति ने हमें इस दुनिया के सामने रखा है, अब उसी माँ को बुढ़ापे में हम होते हुए भी उन्हें अकेलेपन के चुभन से चूस रहे हैं। इसके जिम्मेदार तो हम ही हैं, हमारी जीवन शैली, हमारी मानसिकता इत्यादि। ठीक इसी के तहत अब्बूरी छायादेवी जी की 'उडरोज़' कहानी द्रष्टव्य है।

इस दुनिया में ज्यादातर स्त्री को एक चीज़ तथा अल्पवान इन्सान समझा □ा रहा है। स्त्रियों को अपने लिए कोई समय तो नहीं रहता। आदमी के प्राथमिक जरूरतें जैसे रोटी, कपड़ा, मकान के विषय में भी स्त्रियों को अपने लिए नहीं रहता। घर में पुरुष, बच्चे, अपनों से ऊँचे दर्जे पर रहनेवाली सास, ननद, इन सबकी जरूरतों को पूरा करने के बाद ही स्त्री को अपना काम अल्प और बेकार महसूस होता है। आखिर सब की जरूरतें पूरी होने के बाद नींद भी नहीं आ रही तो नींद की गोलियाँ लेकर शाश्वत नींद में जाना चाहनेवाली भारतीय नारी की मानसिकता का आत्म साक्षात्कार करती है अब्बूरी छायादेवी जी की 'सुखांतम' कहानी।

लड़कियों की उम्र बढ़ने के साथ-साथ पिता का प्यार दूर हो जाता है। बहुत सारे परिवारों में पिता लड़कियों से दूर रहते हैं। बड़े भाई, छोटे भाई होने पर भी पिता से उनका आत्मीय बंधन ज्यादा होता है। दिन-ब-दिन पिता से दूर होनेवाली लड़कियों की वेदना किस तरह की होती है इसकी साक्ष्य 'स्पर्श' कहानी है।

युग बदल रहा है, पीढ़ियाँ बदल रही हैं, लेकिन शोषण के तौर पर नारी की स्थिति जैसी की तैसी ही महसूस हो रही है। साथ ही उनके प्रति समाज तथा पुरुष की दृष्टि भी बदली नहीं। हमेशा पुरुष और समाज स्त्री पर अपना अधिकार जताकर उनकी उन्नति में बाधक बन रहे हैं। यह एक बड़ी सामाजिक विषमता है कि नारी जितनी पढ़ी-लिखी तथा उन्नत दर्जे पर होने पर भी पुरुष के समान या पुरुष के बगैर उसके लिए कोई पहचान देने के लिए ये समाज तैयार नहीं। 'सत्यवति' भी ठीक इसी हालत से गुजरती है।

समकालीन जीवन परिवेश अपने पूरे दबावों के साथ मनुष्य को मूल्य हीनता की ओर धकेल रहा है। उसे कहीं पर स्थित होकर उन सारे दबावों का सामना करने नहीं दिया जा रहा है। मनुष्य उसके सामने निढाल होकर दशाहीनता का शिकार हो रहा है। आदर्श और आर्थिक दबावों की टकराहट में कुंती का व्यक्तित्व टूट कर बिखरता है। मध्यवर्ग के समाज की अभिशप्त जिंदगी की यह यथार्थपरक दस्तावेज पाठकों के मन को गहरी संवेदना में सराबोर कर देती है।

समाज में जब तक आर्थिक विषमता की खाई बनी रहेगी तब तक आदर्श सामाजिक जीवन की बात निरी कल्पना ही है। बिना इस खाई को पाटे देशोत्थान की कोई योजना कारगर नहीं हो सकती। देश में जो लोग वर्ग-संघर्ष की बात करके क्रांति का गीत गा रहे हैं तथा जो लोग पूँजीवाद की पीठ थपथपाकर उसे मानव कल्याण का मसीहा बता रहे हैं उन्हें सर्वप्रथम आर्थिक असंतुलन की समस्या पर गंभीरता से विचार करना चाहिए और उसके बाद ही समाजहित की कोई कल्याणकारी योजना सामने रखती चाहिए। यथार्थ से आँख मीचकर किया हुआ कोई भी कार्य हमें थ्कानेवाला और निराश के गर्त में ढकेलने वाला सिद्ध होगा। 'मैं हार गई' कहानी यही सिद्ध करती है।

भ्रष्ट व्यवस्था और तंत्र की चोट व्यक्ति और समाज को निष्प्राण एवं संज्ञा-शून्य बनाती जा रही है। इस दुर्दशा को देखकर हमारे मन में आधुनिक

न्याय को लेकर कई प्रश्न उठ खड़े होना स्वाभाविक है। यदि निष्ठा और ईमानदारी पूर्वक एक मूल्यवान जिंदगी जीने का यही परिणाम है तो व्यक्ति आखिर इनसे क्यों चिपका रहे? क्यों अपनी भावी पीढ़ी के भविष्य को खराब करे? अपनों में पराया करार दिया जाकर जीने की यंत्रणा किसी कदर कम असह्य नहीं होती है। इसी वज़ह से आशा के पापा जेल से रिहा होकर भी प्रसन्न नहीं हैं। हमारी यह न्याय पद्धति अभिशप्त यह व्यक्ति हमेशा के लिए मर जाता है। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा है कि वह रिहा हो गया है और उसे सज़ा नहीं हुई है। जबकि नारी का मनोविज्ञान उसके संस्कारों के कारण पुरुष का सदैव साथ देता है। पर पुरुष की वृत्ति अपने बचाव की होती है। इस मानसिक द्वंद्व को बड़ी सफलता के साथ व्यक्त किया गया है 'अकेली' कहानी में। मनुष्य के अकेलेपन की समस्या दो तरफ होती है। उसके बाह्य रूप को जहाँ हम लोगों को अपनापा देकर भुलाती है, वहीं अपने आंतरिक पक्ष को उनके द्वारा की गई प्रशंसाओं से जोड़ती है।

आजकल की सामाजिक और आर्थिक स्थितियाँ इतनी बदल गयी हैं कि पैसे कमाने के लिए अगर थोड़ा मौका मिल गया तो इस्तेमाल करने पर लोग तुले हैं। निम्न वर्ग के लोग तो वहीं के वहीं हैं, उनकी स्थिति सुधरने की बजाय बिगड़ती जा रही है। इस हालत से जुड़ी हुई एक कहानी है 'मौका'।

आत्म सम्मान के साथ जीने के लिए स्त्रियों को आत्मविश्वास होना □रूरी है। उसके लिए धैर्य और साहस के साथ खड़ा होना होगा। मन की बात को स्पष्ट से व्यक्त करना जरूरी जान पड़ता है। इसके लिए जरूरी होने वाली मानसिक स्थैर्य को देती है 'प्रश्नार्थक' कहानी। पति से छोड़ी गयी स्त्री कितनी महान व्यक्तित्ववाली होने पर भी समाज ही नहीं, मायके वाले भी सम्मान नहीं देते हैं। यह समाज, पुरुश के बेसहारे जीनेवाली स्त्री को हमेशा उसके रास्ते में बाधक बनकर खड़े हो जाते हैं। किसी-न-किसी तरह उस पर कीचड़ डालने की

कोशिश तो करते हैं। आखिर समाज में महान एवं आदर्शवान के रूप में दिखाई देनेवाला पुरुष का भी यही काम है, स्त्री को एक इनसान के रूप में नहीं, चीज़ के रूप में देख रहा है।

30 साल या 60 साल की गृहस्थी के बाद भी पुरुष चाहे तो रिश्ते तो आसानी से तोड़ने को तैयार रहता है। लेकिन स्त्री की स्थिति तो इससे बिलकुल विपरीत है। क्या स्त्री पापा, पति, बेटा इन तीनों के बिना जिंदगी नहीं गुजार सकती? चाहती है तो जी सकती है। अडोस-पडोस क्या कहेंगे क्या यह भय सिर्फ उसे ही है? उन पति, बेटे को नहीं? उनका धैर्य यही है कि समाज सिर्फ स्त्री को ही गलत ठहराती है। ठीक उसी तरह इन तमाम समस्याओं को लेकर 'मोग्गु' कहानी गुजरती है।

परंपरा से मान्य सामाजिक मान्यताएँ आदमी के जीवन मूल्यों को बहुत दूर तक प्रभावित करती हैं और कई बार जाने-अनजाने मनुष्य उसके सामने घुअने टेकने के लिए बाध्य हो जाता है। ऐ ओर अपने हृदय की आवाज़ तो दूसरी ओर स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर प्रचलित सामाजिक मान्यताओं के प्रति संस्कारगत निष्ठा के चलते 'कनिका' अनिर्णय की स्थिति में है।

पति-पत्नी के बीच में किसी दूसरे पुरुष का प्रवेश भले ही वह कितनी भी पवित्रता को बनाये रखते हुए हो, पति के मन में संदेह उत्पन्न हो ही जाता है। यह भी एक पुरुष मन की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। वैसे में स्त्री भी कभी-कभी अपने पति पर शक किया करती है और यह भी चाहती है कि अपने पति पर कोई स्त्री फूलन उलझाएँ। नया जीवन-मूल्य स्त्री पुरुष की सहज बातचीत को स्वीकृति देनेवाला है।

समाज में, हर युग में ऐसे अनेक स्त्री और पुरुष उत्पन्न होते रहे हैं, जो एक दूसरे के साथ अमरण प्रेम निभाते रहे हैं। प्रेम बंधन का रूप जिस तरह निरपेक्ष रहता है उसी तरह गुण निरपेक्ष भी होता है। रूप निरपेक्ष प्रेम के

उदाहरण बहुत कम देखने को मिलते हैं। जिस तरह एक माँ अपने बच्चे के दुर्गुणों को नज़र अंदाज करते हुए उसे अपना स्नेह दे सकती है, उसी तरह एक प्रेयसी/प्रेमिका अपने प्रेमी के या एक पत्नी अपने पति के दुर्गुणों को सहते हुए भी अपना प्रेम दे सकती है। यह उदाहरण स्त्री के अंतःकरण की विशेषता मानी जा सकती है। परंतु पुरुष के अंतःकरण में इसी तरह की उदारता हो सकती है, इसमें कभी-कभी शक हो सकता है।

शंकर का इकलौता पुत्र किशनू अपने दुरव्यसनी बाप को अपने से दूर रखकर उसे किसी भी तरह की सहायता न करने का कठोर निर्णय ले लेता है। यह पुरुष के अंतःकरण की प्रतिनिधि प्रवृत्ति है। लेकिन आनंदी अपने दुरव्यसनी पति से बुरी तरह से सताये जाने पर भी हर पल वह उसका साथ देकर स्त्री की उदारता को प्रस्फुटित करती है।

नारी हमेशा वैचारिक दृष्टि से परिस्थितियों से विद्रोह करती है किंतु यथार्थ में कार्यान्वयन के समय कमज़ोर पड़ती है। प्रकट विद्रोह में असमर्थ सिद्ध होता है। लोग अच्छा कहें, इस भावना से रूप अपनी इच्छाओं का होम करने को प्रवृत्त होती है। सामाजिक तिरस्कार सहना उसकी कमज़ोरी है। लादे हुए निर्णयों के कारण मानसिक कमज़ोरी और स्वनिर्णय की अक्षमता का प्रतीक ‘रूप’ है, जिसने अनेक बार वैचारिक रूप से निर्णय लेने का प्रयास किया, लेकिन उसे आचरण में ले आने की कोशिश में हार गई।

स्त्री को हमेशा पुरुष के पीछे उनकी परछाई बनकर रास्ता काटना पड़ रहा है, लेकिन पुरुष चाहे पिता हो, पति हो या बेटा हो वह सोचता है कि स्त्री का साथ दे रहा है। लेकिन वास्तव में ये सब होता नहीं। और यह भी हमेशा होता रहता है कि बूढ़ी माँ की अकेले जीने की तमन्ना को लेकर बेटे हिम्मत देने के बदले धमकी देते हैं।

आधुनिक समाज में मानव चाहे गाँव का हो या शहर का हो यंत्र की भाँति यांत्रिक जीवन बिता रहा है। कोई भी भावनाओं को महत्व नहीं दे रहा है। किसी पर विश्वास नहीं किया जा रहा है। अपनेपन को खो बैठे हैं। सिर्फ खाना, सोना, पैसे कमाने के बगैर और अपने वासनाओं को पूरा कर लेने में दिन-ब-दिन मानव में नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। ठीक इसी तरह की समस्याओं को 'चारों के लिए' (नलुगुरि कोसम) कहानी रेखांकित करती है।

* * *

# संदर्भ ग्रंथ सूची


| **क्र.सं.** | **रचना** | **लेखक/लेखिका** | **प्रकाशन** |
|---|---|---|---|
| 1 | मैं हार गई | मन्नू भंडारी | अक्षरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, सं.1957 |
| 2 | यही स□है | मन्नू भंडारी | अक्षरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, 1966 |
| 3 | एक प्लेट सैलाब | मन्नू भंडारी | अक्षरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, 1968 |
| 4 | मेरी प्रिय कहानियाँ | मन्नू भंडारी | राजपाल एंड संज, दिल्ली, तीसरा सं.1977 |
| 5 | आपका बंटी | मन्नू भंडारी | अक्षरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, 1971 |
| 6 | श्रेष्ठ कहानियाँ | मन्नू भंडारी | अक्षरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, 1977 |
| 7 | त्रिशंकु | मन्नू भंडारी | अक्षरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, 1978 |
| 8 | एक इंच मुस्कान | मन्नू भंडारी | राजेंद्र यादव, मन्नू भंडारी, राजपाल एंड संज, दिल्ली, 1962 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 9 | महाभोज | मन्नू भंडारी | राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लिमिटेड, नई दिल्ली-110002, 1979 |
| 10 | तन मार्गम् | अब्बूरी छायादेवी | लिखिता प्रेस, हैदराबाद, 2006 |
| 11 | एवर्नि चेसुकोनु? | अब्बूरी छायादेवी | लिखिता प्रेस, हैदराबाद, 2009 |
| 12 | अब्बूरी छायादेवी कहानियाँ | अब्बूरी छायादेवी | लिखिता प्रेस, हैदराबाद, 1991 |
| 13 | हमारी समस्याएँ- कृष्ण जी समाधानें | अब्बूरी छायादेवी | लिखिता प्रेस, हैदराबाद, 1997 |
| 14 | स्त्रियों का जीवन- जिड्डु कृष्ण मूर्ति | अब्बूरी छायादेवी | लिखिता प्रेस, हैदराबाद, 1998 |
| 15 | बात की मदद | अब्बूरी छायादेवी | नव्या कालम, 2006 |
| 16 | हमारी जीवनियाँ, जिड्डु कृष्णमूर्ति की व्याख्यानें | अब्बूरी छायादेवी | नव्या कालम, 1998 |
| 17 | मोडर्न तेलुगु पोयट्रि अंग्रेज़ी अनुवाद संकलन | अब्बूरी छायादेवी | नव्या कालम, 1956 |
| 18 | 20 वीं शताब्दी में तेलुगु रचइयित्रयों की रचनाएँ | अब्बूरी छायादेवी | नव्या कालम, 2002 |
| 19 | कथा कोश | अब्बूरी छायादेवी (सह संपादक) | नव्या कालम, 2006 |
| 20 | कथाकार मन्नू भंडारी | श्री अनिता राजूरकर | नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली-110002, सं.1987 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 21 | मन्नू भंडारी की कहानियों में आधुनिकता बोध | प्रो.मा गुरुपादप्पा | चंद्रलोक प्रकाशन, कानपुर-208011, 1997 |
| 22 | हिंदी साहित्य के वाद | श्री द्वारका प्रसाद मित्तल | साहित्य निकेतन, कानपुर, 1970, ज्ञान मंडल लिमिटेड, वारणासी, 1986 |
| 23 | हिंदी साहित्य कोश | डॉ.धीरेंद्र वर्मा | ज्ञान मंडल लिमिटेड, वारणासी, 1986 |
| 24 | हिंदी कहानी का इतिहास | लाल चंद्र गुप्त मंगल | संजीव प्रकाशन, 1988 |
| 25 | यथार्थवाद | डॉ.शिवकुमार मिश्र | दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली-1975 |